ॐ

श्री मुनिसुव्रततीर्थंकरदेवाय नमः

दो सखियाँ

भगवान श्रीमुनिसुव्रतनाथ के शासनकाल में हुई
महासती अंजना का जीवनचरित्र

गुजराती लेखक :

ब्रह्मचारी हरिलाल जैन

सोनगढ़

हिन्दी अनुवाद एवं सज़्ादन :

पण्डित देवेन्द्रकुमार जैन

बिजौलियां, ज़ीलवाड़ा (राज.)

: प्रकाशक :

श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट

302, कृष्णकुंज, प्लॉट नं. 30, नवयुग सी.एच.एस. लि.
वी. एल. मेहता मार्ग, विलेपार्ले (वेस्ट), मुम्बई-400 056
फोन : (022) 26130820

प्रथमावृत्ति :

ISBN :

मूल्य राशि :

प्राप्ति स्थान :

1. **श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट,**
   सोनगढ़ (सौराष्ट्र) - 364250, फोन : 02846-244334
2. **श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट**
   302, कृष्णकुंज, प्लॉट नं. 30, वी. एल. महेता पार्क, विलेपार्ला (वेस्ट),
   मुम्बई-400056, फोन (022) 26130820 Email - vitragva@vsnl.com
3. **श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (मंगलायतन)**
   अलीगढ़-आगरा मार्ग, सासनी-204216 (उ.प्र.)
4. **पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट,**
   ए-4, बापू नगर, जयपुर, राजस्थान-302015, फोन : (0141) 2707458
5. **पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट,**
   कहान नगर, लाम रोड, देवलाली-422401, फोन : (0253) 2491044
6. **श्री परमागम प्रकाशन समिति**
   श्री परमागम श्रावक ट्रस्ट, सिद्धक्षेत्र, सोनागिरजी, दतिया (म.प्र.)
7. **श्री सीमन्धर कुन्दकुन्द कहान आध्यात्मिक ट्रस्ट**
   योगी निकेतन प्लाट, 'स्वरुचि' सवाणी होलनी शेरीमां, निर्मला कोन्वेन्ट रोड
   राजकोट-360007 फोन : (0281) 2477728, मो. 09374100508

टाइप सेटिंग :
विवेक ग्राफिक्स, अलीगढ़

मुद्रक व्यवस्था :

प्रकाशकीय

'दो सखियाँ' नामक इस पुस्तक को प्रसिद्ध करते हुए हमें अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है।

भगवान महावीर की दिव्यध्वनि में से प्रवाहित और कुन्दकुन्दादि आचार्यों प्रणीत गम्भीर वचनों का हार्द समझानेवाले पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी एवं तद्भक्त पूज्य बहिनश्री चम्पाबेन की आत्मसाधना से स्वर्णपुरी एक पवित्र तीर्थधाम बन गया है। उभय महात्माओं के प्रताप से द्रव्यानुयोग के गम्भीर रहस्यों के साथ-साथ प्रथमानुयोग की प्रेरक कथायें भी आत्महित में निमित्त बन रही है।

महासती अंजना की यह कथा अत्यन्त वैराग्य प्रेरक है। पूज्य गुरुदेवश्री को यह कथा बहुत प्रिय थी। जब-जब पुराण में वे इस कथा का वाँचन करते, तब उनकी आँखों में आँसू आ जाते थे। इस कथा के वाँचन के समय वे फरमाते थे कि 'धर्मात्मा के ऊपर ऐसा दुःख मैं नहीं देख सकता।' प्रवचन में भी गुरुदेवश्री गद्गद् वाणी से अनेक बार अंजना सती का उदाहरण प्रस्तुत करते थे, तब श्रोता समाज वैराग्यरस में सराबोर हो जाती थी।

महासती अंजना का जीवन वैराग्य और धैर्य प्रेरक है। किसी भी प्रकार के प्रसंग से हताश हुए जीव को यह कथा उत्साहित करती है और उसे धर्म की आराधना में दृढ़ता प्रदान करती है... उसमें भी वनवास के समय गुफा में अंजना सती को मुनिराज के दर्शन का जो प्रसंग बना, वह मुमुक्षु के रोम-रोम को उल्लसित कर देता है... तब जीवन की हताशा विनष्ट हो जाती है... संसार के सर्व दुःख विस्मृत हो जाते हैं... उन्हें संसार में सच्ची शरण तो देव-गुरु-धर्म ही है, इस बात का साक्षात् परिदृश्य खड़ा होता है।

बालकों और बड़ों में सभी में उत्तम संस्कार अत्यन्त सहजता से सिंचन करने के लिये यदि कोई साधन हो तो यह कथा-वार्ता है। वार्ता के रस द्वारा वीतरागरस के संस्कारों का सिंचन करने के लिये इस पुस्तक द्वारा प्रयत्न किया है।

इस पुस्तक का सुन्दर लेखन अनेक वर्षों पूर्व ब्रह्मचारी हरिलाल जैन, सोनगढ़ ने किया है। जिन्होंने अनेक कथा-साहित्य की पुस्तकें भी लिखी हैं। इस विशेष कार्य हेतु संस्था हरिभाईजी का आभार व्यक्त करती है। प्रस्तुत गुजराती संस्करण का हिन्दी रूपान्तर एवं यथायोग्य सम्पादन कर इस रूप में प्रस्तुत करने का कार्य पण्डित देवेन्द्रकुमार जैन, बिजौलियां, भीलवाड़ा (राज.) ने किया है।

हमें विश्वास है कि इस पुस्तक द्वारा सभी आत्मार्थी जीवों के जीवन में आत्महित के संस्कारों का सिंचन होगा।

सभी आत्मार्थीजन इस पुस्तक के माध्यम से अपने जीवन में तत्त्वज्ञान, वैराग्य के संस्कारों को संजोयें इस भावना के साथ।

ट्रस्टीगण

श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट

मुम्बई

ॐ

॥ श्री मुनिसुव्रततीर्थंकरदेवाय नमः ॥

दो सखियाँ

[महासती अंजना का जीवन-चरित्र]

१

प्रीति और अप्रीति

यह बात उस समय की है, जब भगवान श्री मुनिसुव्रतनाथ का धर्मतीर्थ चल रहा था। अनन्तवीर्य केवली के द्वारा धर्मोपदेश का श्रवण कर हनुमान, विभीषण, इत्यादि ने व्रत अङ्गीकार किये, उनमें भी हनुमान का सम्यक्त्व एवं शील विशेष प्रशंसनीय है।

इस प्रकार भगवान महावीर की धर्मसभा में हनुमान की प्रशंसा सुनकर राजा श्रेणिक ने प्रश्न किया —

'हे प्रभु! ये हनुमान किसके पुत्र थे? इनका जन्म कहाँ हुआ था? कृपा कर बतलाने का कष्ट करें।'

राजा श्रेणिक के इस प्रश्न को सुनकर 'जिन्हें सत्पुरुषों की

कथाओं से विशेष अनुराग है' – ऐसे इन्द्रभूति गौतमस्वामी अपनी सुमधुर वाणी में इस प्रकार कहने लगे —

भरतक्षेत्र की दक्षिण दिशा में विद्याधर राजा महेन्द्र राज्य करते थे, उन्होंने एक महेन्द्रपुर नामक सुन्दर नगर की स्थापना की थी। राजा महेन्द्र की जीवनसङ्गिनी का नाम हृदयवेगा था, जिससे अरिन्दम आदि सौ पुत्र एवं अञ्जनासुन्दरी नामक एक महागुणवान कन्या का जन्म हुआ।

एक बार अञ्जनासुन्दरी की यौवनावस्था देखकर राजा महेन्द्र को उसके विवाह की चिन्ता उत्पन्न हुई। जिस प्रकार सुलोचना को देखकर राजा अकम्पन का चिन्ता उत्पन्न हुई थी; इसी प्रकार अंजना को (नवयौवन) देखकर राजा महेन्द्र को चिन्ता उत्पन्न हुई। अत: उन्होंने अपने बुद्धिमान मन्त्रियों को बुलाकर उनसे अञ्जनासुन्दरी के वैवाहिक सम्बन्ध के सन्दर्भ में विचार-विमर्श किया कि पुत्री अञ्जना का शुभ विवाह किसके साथ करना उचित है ?

राजा द्वारा पूछे गये प्रश्न के प्रत्युत्तरस्वरूप किसी ने लंकाधिपति रावण के नाम का तो किसी ने इन्द्रजीत का तो किसी ने मेघनाथ के नाम का प्रस्ताव रखा।

प्राप्त प्रस्तावों को सुनकर धन्यमन्त्री कहने लगा – 'हे राजन्! दक्षिणश्रेणी में कनकपुर नामक नगर के राजा हिरण्यप्रभ एवं रानी सुमना का सुयोग्य पुत्र सौदामिनीकुमार (विद्युतप्रभ) है। वह गुणवन्त, यशवन्त तो है ही, साथ ही पराक्रमी भी ऐसा है कि सारे विद्याधर भी एक साथ युद्ध हेतु प्रस्तुत हों, तथापि उसे पराजित

नहीं कर सकते; अत: मेरे विचार से तो राजकुमारी के लिए इससे उपयुक्त वर अन्य नहीं हो सकता।'

धन्यमन्त्री के उक्त प्रस्ताव को सुनकर सन्देहपराग नामक दूसरा मन्त्री अत्यन्त गम्भीर होकर कहने लगा – 'यद्यपि यह नि:सन्देह सत्य है कि कुमार विद्युतप्रभ महाभव्य है, किन्तु उनके मन में सदैव संसार की अनित्यता-क्षणभंगुरता की विचार तरङ्गें प्रवाहित होती रहती हैं, इतना ही नहीं; वे वैरागी कुमार तो छोटी उम्र में ही इस असार संसार का परित्याग करके, मोक्षप्राप्ति हेतु अन्तर -बाह्य दिगम्बरदशा को अङ्गीकार कर लेंगे और विषयाभिलाषा विहीन वे कुमार, विकार एवं अपूर्णता का क्षय करके परिपूर्ण साध्यदशा को प्राप्त करेंगे। ऐसी स्थिति में उनके साथ राजकुमारी अञ्जना का विवाह करने से कन्या पतिविहीन हो जाएगी। इसलिए उसके साथ राजकुमार का विवाह मुझे समुचित प्रतीत नहीं होता।'

सन्देहपराग की गम्भीरता को भङ्ग करते हुए राजा महेन्द्र ने कहा — 'मन्त्रीवर! क्या कोई अन्य राजकुमार आपको अञ्जना के लिए उपयुक्त प्रतीत होता है ?'

मन्त्री ने विनम्रतापूर्वक कहा —

हाँ, राजन्! भरतक्षेत्र के विजयार्द्धपर्वत की दक्षिणश्रेणी में आदित्यपुर नामक नगर है, वहाँ राजा प्रहलाद एवं रानी केतुमति के

वायुकुमार (पवनञ्जय या पवनकुमार) नामक पुत्र है, जो कि महापराक्रमी, रूपवान, शीलवान एवं गुणवान है, वही सर्व प्रकार से कन्या के योग्य उत्तम वर है – ऐसा मेरा मानना है।

सन्देहपराग मन्त्री की बात सुनकर सबको अत्यन्त हर्ष हुआ और सभी ने इस सम्बन्ध में अपनी सहमति प्रदर्शित की।

✦ ✦ ✦

बसन्तऋतु एवं फाल्गुन मास की अष्टाह्निका का शुभागमन हुआ। फाल्गुन शुक्ला अष्टमी से पूर्णिमा तक चलनेवाला अष्टाह्निका पर्व महामङ्गलस्वरूप है। इस पावन अवसर पर इन्द्रादि देव तो नन्दीश्वर द्वीप में विराजमान शाश्वत् जिनबिम्बों के दर्शन-पूजनार्थ जाते हैं और मानव समाज भी अपनी-अपनी शक्ति एवं भावनानुसार इस पर्व को उत्साहपूर्वक मनाता है।

उस समय महेन्द्रनगर निवासी विद्याधर भी पूजन-सामग्री लेकर कैलाशपर्वत पर पहुँचे। कैलाशपर्वत, भगवान ऋषभदेव की पवित्र निर्वाणस्थली होने से परम पावन है, पूज्यनीय है।

कुमारी अञ्जनासहित राजा महेन्द्र ने भी वहाँ पहुँचकर जिनप्रभु के दर्शन-पूजन किये, तत्पश्चात् गिरिराज के प्राकृतिक सौन्दर्य का अवलोकन करने के लिए राजा महेन्द्र एक स्वच्छ शिला पर बैठ गये।

उसी समय कुमार पवनञ्जयसहित राजा प्रहलाद भी चक्रवर्ती भरत द्वारा निर्मित जिनबिम्बों के दर्शन-पूजनार्थ वहीं पधारे हुए थे और दर्शन-पूजन से निवृत्त हो, गिरिराज पर ही घूम रहे थे कि

अनायास राजा महेन्द्र की नजर उन पर पड़ी। राजा महेन्द्र ने प्राथमिक अभिवादन के पश्चात् उनसे कहा – 'हे राजन्! बहुत दिनों से एक विचार मन में चल रहा है कि अपनी प्रिय पुत्री अञ्जना का शुभ विवाह आपके सुपुत्र पवनकुमार के साथ कर दूँ, क्या आप मेरी इस विनम्र प्रार्थना को स्वीकार करने की कृपा करेंगे?'

इस बात को सुनकर राजा प्रहलाद बोले – 'हे राजन्! यह तो मेरे पुत्र का महान भाग्य है कि उसे अञ्जना जैसी सुशील जीवनसङ्गिनी प्राप्त हो रही है। आप इस सम्बन्ध को पक्का ही समझिये।'

इस प्रकार अञ्जना एवं पवनकुमार का सम्बन्ध तो निश्चित् हो ही गया, तीन दिन पश्चात् उसी मानसरोवर पर विवाह होना भी तय हो गया।

✦ ✦ ✦

अञ्जना के अद्भुत सौन्दर्य से कुमार पवन अपरिचित न थे; अत: वे उसे देखने के लिए अत्यन्त व्यग्र हो उठे, तीन दिन के विरह को भी सहन करने में वे अपने को असमर्थ पा रहे थे, यही चिन्तन उनके हृदय में चल रहा था कि कब अञ्जना को देखूँ?

अत्यन्त व्यग्र होकर उन्होंने यह बात अपने अन्तरङ्ग मित्र प्रहस्त से कही – ''हे मित्र! तुम्हारे अतिरिक्त यह बात मैं अन्य किससे कहूँ? जैसे बालक अपना दु:ख माता से; शिष्य, गुरु से; किसान, राजा से एवं रोगी, वैद्य से कहता है; उसी प्रकार बुद्धिमान अपने अन्तरङ्गभाव मित्र से कहता है – यही समझकर मैं अपने मन की बात तुमसे कहता हूँ – 'हे मित्र! राजा महेन्द्र की पुत्री अञ्जना को देखे बिना मुझे चैन नहीं है।''

कुमार की व्यग्रतापूर्ण बात सुनकर प्रहस्त मुस्कारा उठा। रात्रि

होते ही दोनों मित्र विमान द्वारा अञ्जना के महल में पहुँच गये। झरोखे में छुपकर अञ्जना के सौन्दर्य को देखने से कुमार को अत्याधिक हर्ष हुआ।

उस समय सात मंजिले महल में अञ्जना अपनी सखियों सहित बैठी हुई थी, तब अञ्जना की बुद्धिमान सखी बसन्तमाला कहने लगी – 'हे सखी! तुम धन्य हो, तुम्हारा सौभाग्य है कि तुम्हारे पिता ने पवनकुमार जैसा जीवनसाथी तुम्हारे लिए चुना है। सुना है कि पवनकुमार महापराक्रमी और भव्यात्मा है।'

बसन्तमाला की इस बात को सुनकर कुमार आनन्दित हो उठे। तभी दूसरी सखी मिश्रकेशी इस प्रकार कहने लगी – 'तुम पवनकुमार को पराक्रमी बतलाती हो और इस सम्बन्ध का बड़े ही गौरवपूर्ण ढंग से बखान करती हो – यह तुम्हारा अज्ञान है। कुमारी का सम्बन्ध यदि विद्युतप्रभ के साथ होता तो बात ही कुछ और होती। अरे! कहाँ विद्युतप्रभ और कहाँ पवनकुमार – दोनों में जमीन-आसमान का अन्तर है। तुम्हें ज्ञात होगा कि सबसे पहला विचार विद्युतप्रभ के साथ सम्बन्ध करने का ही था, पर जब महाराज ने सुना कि वे तो कुछ समय पश्चात् मुनि होनेवाले हैं, तब इस प्रस्ताव को निरस्त कर दिया गया, किन्तु वास्तव में यह ठीक नहीं हुआ। अरे! अन्य क्षुद्र पुरुष के दीर्घकालीन संयोग की अपेक्षा विद्युतप्रभ जैसे महापुरुष का संयोग तो एक क्षणमात्र के लिए भी श्रेष्ठ है।'

सखी की अपमानजनक बात सुनते ही पवनकुमार क्रोधित हो उठे, वे विचारने लगे – 'अञ्जना को मुझसे किञ्चित् भी स्नेह नहीं है। लगता है विद्युतप्रभ से ही इसका स्नेह है, तभी तो सखी

के ऐसे वचन सुनकर भी मौन है।'

— ऐसा विचारकर उन्होंने क्रोधित हो म्यान से तलवार निकाल ली, किन्तु तभी मित्र प्रहस्त ने उन्हें रोकते हुए कहा – 'मित्र! हम यहाँ गुप्तरूप से आये हैं और इसी तरह हमें वापस चलना चाहिए।' प्रहस्त के कथनानुसार कुमार ने क्रोधितदशा में ही वहाँ से प्रस्थान तो कर दिया, किन्तु वे अञ्जना के प्रति एकदम उदासचित्त हो गये; अत: उन्होंने उसके परित्याग का निर्णय कर लिया।

देखो परिणामों की विचित्रता! कुछ देर पूर्व जिसे देखे बिना चैन नहीं था, अब उसी का मुख देखना भी असहनीय प्रतीत होने लगा, रे संसार...!

अपने निवास पर आते ही पवनकुमार ने प्रहस्त से कहा – 'हे मित्र! अपना स्थान अञ्जना के निवास के अत्यन्त समीप है; अत: अब अपने को यहाँ नहीं रहना है, उससे स्पर्शित होकर आनेवाली हवा भी मुझे कष्टप्रद प्रतीत होती है; अत: चलो, यहाँ से चलें।'

कुमार की आज्ञा पाते ही उनके सम्पूर्ण संघ ने प्रस्थान की तैयारी प्रारम्भ कर दी; फलत: हाथी, घोड़े, रथ, पैदल आदि सेना में कोलाहल का वातावरण उत्पन्न हो गया।

पवनकुमार के संघ के लोग अचानक प्रस्थान का आदेश सुनकर अचम्भित हो उठे कि यह क्या? बिना कारण प्रस्थान की आज्ञा क्यों? कोई कहने लगा कि इसका नाम पवनञ्जय है, अत: इसका चित्त भी पवन के समान चञ्चल है।

अञ्जना का निवास निकट ही होने से कुमार की सेना के प्रस्थान का कोलाहल शीघ्र ही उनके कानों तक जा पहुँचा, उससे

उनके हृदय पर मानों वज्रपात ही आ गिरा। वह विचारने लगी – 'हाय! क्या करूँ? अब क्या होगा? मेरा तो कोई अपराध भी दिखायी नहीं देता। लगता है मिश्रकेशी द्वारा कथित निन्दापूर्ण वचनों की भनक कुमार को लग गयी है – यही कारण है कि मेरे प्राणनाथ मुझ पर कृपारहित होकर मेरा परित्याग कर प्रस्थान कर रहे हैं। यदि मेरे प्राणनाथ मेरा परित्याग कर देंगे तो मैं भी अन्न -जल का परित्याग कर शरीर त्याग दूँगी।' इस प्रकार विचार करते-करते कुमारी अञ्जना बेहोश होकर भूमि पर गिर पड़ी।

अञ्जना के पिता राजा महेन्द्र को जब कुमार के प्रस्थान के समाचार विदित हुए तो वे अपने बन्धुजनों सहित राजा प्रहलाद के निकट आये और दोनों ने कुमार को समझाया – 'हे शूरवीर! प्रस्थान के विचार को निरस्त कर हम दोनों के मनोरथ की सिद्धि करो, गुरुजनों की आज्ञा आनन्ददायिनी होती है; अत: हमारी आज्ञा स्वीकार करो।'

— ऐसा कहकर उन्होंने प्रेमपूर्वक कुमार का हाथ पकड़ लिया।

पिता एवं पितातुल्य राजा महेन्द्र के वचनों द्वारा कुमार विनम्र हो गये और गुरुजनों की गुरुता का उल्लङ्घन करने में अपने आपको असमर्थ अनुभव करने लगे; अत: प्रस्थान की आज्ञा को तो उन्होंने निरस्त कर दिया, पर मन ही मन यह निश्चय कर लिया कि अञ्जना से विवाह करके, उसका परित्याग कर दूँगा।

राजकुमार के प्रस्थान न करने के समाचार सुनते ही अञ्जना का हृदय प्रसन्न हो गया और फिर मानसरोवर के किनारे शास्त्रोक्त विधि-विधानपूर्वक पवनकुमार एवं कुमारी अञ्जना का शुभ-विवाह सम्पन्न हुआ। अञ्जना को तो कुमार के प्रति पूर्ण प्रीतिभाव

था, किन्तु कुमार का भाव अञ्जना के प्रति अप्रीतिरूप था, किन्तु इस बात का परिज्ञान अञ्जना को नहीं था।

विवाह कार्य सम्पन्न हो जाने पर यथासमय सभी ने अपने -अपने देशों को प्रस्थान किया।

यहाँ पर गौतम गणधर राजा श्रेणिक से कहते हैं – **'हे श्रेणिक! जो जीव, वस्तुस्वरूप को न समझकर अज्ञानतावश पर के दोष ग्रहण करते हैं, उन्हें मूर्ख समझना चाहिए और दूसरों के द्वारा किए गये दोष अपने ऊपर आ पड़े तो उसे अपने पापकर्म का फल समझना चाहिए।'**

✦ ✦ ✦

२

संयोग एवं वियोग

पवनकुमार ने तो कुमारी अञ्जना से विवाह कर उसका इस प्रकार त्याग कर दिया कि वे कभी उससे बात तक नहीं करते। अञ्जना, पति के इस निष्ठुर व्यवहार से परम दु:ख का अनुभव करती थी। वह रात्रि को नींद भी नहीं ले पाती थी, उसकी आँखों से निरन्तर आँसुओं की धारा बहती रहती थी एवं शरीर अत्यन्त मलिन हो गया था। पति के प्रति है अपार प्रेम जिसका – ऐसी उस सुन्दरी को पति का नाम भी प्रिय लगता था, उस ओर से आनेवाली हवा भी आनन्ददायिनी प्रतीत होती थी।

पति का रूप तो विवाहरूप वेदी पर ही देखा था, निरन्तर उसी का चिन्तन करती थी। निश्चलरूप से सर्व चेष्टाविहीन हो बैठी रहती थी। मन में पति के रूप का चिन्तन एवं बाह्य में उनके दर्शन की अभिलाषा युक्त होने पर भी दर्शन नहीं हो पाते थे। तब शोक –सन्तप्त होकर चित्रपट पर पति का चित्र बनाने हेतु प्रयत्नशील होती, किन्तु हाथ काँपने लगते और कलम गिर पड़ती। ऐसी दशा हो जाने से अञ्जना का सर्वाङ्ग सुन्दर शरीर भी दुर्बल हो गया, आभूषण ढीले हो गये एवं शरीर पर वस्त्राभूषण भी भाररूप प्रतीत होने लगे।

ऐसी करुणदशा में बारम्बार निज अशुभकर्मोदय की निन्दा करती हुई, वह माता–पिता का स्मरण करती। शरीर अत्यधिक

शिथिल हो जाने से बार-बार बेहोश हो गिर पड़ती अथवा रो-रोकर कण्ठ रुँध जाता था, उस समय उस संतप्त हृदय को शान्तिदायिनी शीतल चन्द्र-किरणें भी दाहरूप प्रतीत होती थी।

बेचारी! विकल्प की मारी, नाना प्रकार विचार करती हुई मन ही मन में पति से अनुरोध करती – 'हे नाथ! आप सदैव मेरे हृदयकमल पर विराजमान होने पर भी मुझे आताप क्यों देते हैं? जब मैंने आपका कोई अपराध नहीं किया, तब बिना कारण मुझ पर कोप क्यों? हे नाथ! अब तो प्रसन्न होइये, मैं तो आपकी दासी हूँ, मेरे चित्त के शोक का हरण कीजिए। जैसे अन्तर में दर्शन होते हैं, वैसे ही बाहर से भी दर्शन दीजिए – यही मेरी करबद्ध प्रार्थना है।'

इस प्रकार निज चित्त में स्थापित पति से बारम्बार मनुहार करती और आँखों से मोती के समान आँसू गिराती रहती थी।

सखी बसन्तमाला, अञ्जना की सेवार्थ अनेक प्रकार की सामग्री लाती, पर उसे तो कुछ रुचिकर नहीं लगता। उसका चित्त तो पति-वियोग में चक्र की भाँति भ्रमित हो गया था। पति-वियोग से दु:खित वह न तो अच्छी तरह स्नान करती, न बाल सँवारती; सर्व क्रियाओं से उदास – ऐसी हो गयी मानो पाषाण ही हो; निरन्तर अश्रु-प्रवाह के बहने से मानो जल ही हो; हृदयदाह से संतप्त मानो अग्नि ही हो; सदा ही पति के विकल्प में रहने के कारण मानो हवा ही हो, और चित्त की शून्यता से मानो वह आकाशरूप ही हो गयी हो।

मोह के कारण उसका ज्ञान भी आच्छादित हो गया था। सर्व अङ्ग इतने दुर्बल हो गये थे कि उठना-बैठना भी दूभर हो गया था। बोलने की अभिलाषा करती, पर शब्द नहीं निकलते; पक्षियों से

कलोल करने की भावना होती, पर वह भी दुष्कर था – इस प्रकार बेचारी सबसे न्यारी गुमसुम बैठी रहती। उसका चित्त तो पति में ही लगा था, उसको निष्कारण पति-वियोग के कारण एक-एक पल भी एक-एक वर्ष के समान प्रतिभासित होता था।

उसे दु:ख से दु:खित देखकर व्याकुलित हुए परिजन भी ऐसा चिन्तन करते थे – 'इसे ऐसा दु:ख किस कारण से हुआ? यह तो इसके द्वरा पूर्वोपार्जित पापकर्मों का ही फल है, अवश्य ही इसने पूर्व जन्म में किसी देव या गुरु की विराधना की होगी, उसी का यह फल है। पवनकुमार तो इस दशा में निमित्तमात्र हैं। अरे! बेचारी भोली-भाली से विवाह करके क्यों इसका परित्याग कर दिया? जिसने कभी पिता के घर में रञ्चमात्र दु:ख नहीं देखा, वही आज अथाह दु:ख को प्राप्त हुई है!'

सभी इसी तरह विचार करते – 'हम क्या उपाय करें? अरे! हम तो भाग्यहीन हैं, यह कार्य हमारे यत्नसाध्य नहीं है। यह तो इसके किसी अशुभकर्म का फल है। हे प्रभु! कब वह शुभ दिन आयेगा, जब यह अपने प्रीतम की कृपादृष्टि प्राप्त करेगी।'

सभी की यही अभिलाषा रहा करती थी।

ऐसे प्रतिकूल प्रसङ्ग के समय अञ्जना, देव-शास्त्र-गुरु की आराधना करते हुए, इन दु:ख के दिनों को व्यतीत कर रही थी। उसकी प्रिय सखी बसन्तमाला उसे प्रसन्न करने के लिए हर सम्भव प्रयत्न करती थी। वे कभी तो आत्मानुभवरूप सम्यग्दर्शन की चर्चा करती तो कभी देव-गुरु-धर्म की भक्ति करती; कभी वीतरागी सन्तों का स्मरण करते हुए उनकी वैराग्यपूर्ण कथा-वार्ता करतीं, उस समय अञ्जना का दु:ख कुछ कम हो जाता था।

इस प्रकार सखीसहित अञ्जना का समय व्यतीत हो रहा था।

✦ ✦ ✦

बाईस वर्ष बाद...

जिस समय की यह कथा है, उस समय राजाओं पर लंकाधिपति महाराज रावण की आज्ञा चलती थी, किन्तु राजा वरुण ही एकमात्र ऐसा राजा था, जो रावण की आज्ञा का उल्लङ्घन करता था। उसका कहना था कि रावण को देवों द्वारा प्रदत्त शस्त्रों का गर्व है, किन्तु मैं उसे गर्वरहित कर दूँगा। इसी बात से कुपित होकर रावण ने उसे दैवीय शस्त्रों के बिना ही पराजित करने की प्रतिज्ञा कर ली और युद्ध में सहायतार्थ अनेक राजाओं को आमन्त्रित किया। पवनकुमार के पिता महाराज प्रहलाद के यहाँ भी पत्र भेजा गया।

पत्र में लिखा था – 'समुद्र के मध्यद्वीप में पातालनगर निवासी राजा वरुण को जीतने के लिए हमने युद्ध प्रारम्भ कर दिया है, किन्तु युद्ध में राजा वरुण के पुत्रों ने हमारे बहनोई खरदूषण को बन्दी बना लिया है; अत: उन्हें छुड़ाने एवं युद्ध में सहायतार्थ आप शीघ्र ही आवें।'

पत्र द्वारा आज्ञा प्राप्त होते ही स्वामीभक्त राजा प्रहलाद, महाराज रावण की सहायतार्थ जाने के लिए तैयार हो गये। उन्हें प्रस्थान के लिए तैयार देखकर कुमार पवनञ्जय ने कहा – 'हे पिताजी! आप युद्ध में पधारने के विचार का त्यागकर मुझे युद्ध में जाने हेतु अनुमति प्रदान करें। मैं शीघ्र ही राजा वरुण को पराजित कर दूँगा।'

✦ ✦ ✦

पिता व माता से आज्ञा लेकर एवं परिजनों को धैर्य बँधाकर, भगवान अरहन्त-सिद्ध के स्मरणपूर्वक कुमार ने विदा ली। उस

समय अञ्जनासुन्दरी आँसू-भीगी आँखों से दरवाजे पर स्तम्भ के सहारे खड़ी थी, जिसे देखकर स्तम्भ में उत्कीर्ण पुतली की आशङ्का होती थी।

उस पर नजर पड़ते ही कुमार ने अपनी नजर फेर ली और कुपित स्वर में कहा – 'अरे! तेरा दर्शन भी कष्टप्रद है, तू इस स्थान से चली जा, निर्लज्ज होकर यहाँ क्यों खड़ी है?'

पति के ये कर्कश वचन भी उस समय अञ्जना को ऐसे मधुर प्रतीत हुए, जैसे बहुत दिनों से प्यासी चातक को मेघ की एक बूँद भी प्रिय लगती है।

वह हाथ जोड़कर गद्गद् हो कहने लगी – 'हे नाथ! जब आप यहाँ रहते थे, तब भी मैं वियोगिनी थी परन्तु 'आप निकट ही हैं' – ऐसी आशा से प्राण जैसे-तैसे टिके रहे, लेकिन अब तो आप क्षेत्र से भी दूर जा रहे हैं; अत: मैं किस प्रकार जीवित रहूँगी?

हे नाथ! परदेश गमन के इस प्रसङ्ग पर आपने न मात्र नगर के मनुष्यों, वरन पशुओं को भी धैर्यता प्रदान की है और सभी को अपनी अमृतमयी वाणी से सन्तुष्ट किया है; एकमात्र मैं ही आपकी अप्राप्ति से दु:खी हूँ। मेरा चित्त आपके चरणारविन्द का अभिलाषी है, आपने अन्य सभी को अपने श्रीमुख से धैर्य प्रदान किया है; अत: यदि उन्हीं की तरह आप मुझे भी कुछ धैर्य प्रदान करते तो अच्छा था। जब आपने ही मेरा परित्याग कर दिया, तब मेरे लिए जगत् में कौन शरणरूप है?'

तब कुमार ने मुँह बिगाड़कर कुपित स्वर में कहा – 'मर!' इतना सुनते ही अञ्जना खेद-खिन्न हो धरती पर गिर पड़ी। कुमार

उसे ढोंग (नाटक) समझकर वहाँ से प्रस्थान कर गये। सेनासहित वे सायंकाल मानसरोवर आ पहुँचे।

✦ ✦ ✦

विद्याबल से एक महल का निर्माण कर, पवनकुमार अपने मित्र प्रहस्तसहित उसमें बैठे हुए हैं और झरोखे में से मानसरोवर की सुन्दरता का अवलोकन कर रहे हैं। सरोवर के स्वच्छ जल में कमल खिले हुए हैं, जिसमें हंस एवं चातक पक्षी क्रीड़ा में संलग्न थे, तभी सूर्यास्त हो गया और चकवा-चकवी बिछुड़ गये। चकवे के वियोग से सन्तप्त चकवी अकेली आकुल-व्याकुल होने लगी। चकवे को देखने के लिए उसके नेत्र अस्ताचल की ओर लगे हुए थे, वह बारम्बार कमल के छिद्र में उसे शोध रही थी, कमल के रस का स्वाद भी उसे विषतुल्य प्रतीत हो रहा था। पानी में दृष्टिगोचर होनेवाले अपने ही प्रतिबिम्ब को अपना प्रीतम समझकर बुला रही थी परन्तु प्रतिबिम्ब आवे कहाँ से ? इस कारण चकवे की अप्राप्ति से अत्यन्त शोकाकुल हो रही थी। सेना के सैनिकों एवं हाथी-घोड़ों के शब्दों को सुनकर अपने पति की आशा से वह अपने चित्त को भ्रमित कर रही थी तथा किनारे पर स्थित वृक्ष पर चढ़कर आकुलतामय भाव से दशों दिशाओं का अवलोकन कर रही थी, किन्तु कहीं भी अपने पति को न देखकर धरती पर आ गिरी।

बहुत समय तक चकवी की ऐसी दशा को पवनकुमार ने ध्यानपूर्वक देखा। चकवी की व्याकुलता को देखकर उनका चित्त दया से आर्त हो गया। उस समय कुमार को अञ्जना को याद सताने लगी। उनके मन में विचारों के तूफान चलने लगे – 'अरे रे! यह चकवी, प्रीतम के वियोग में किस तरह शोकाग्नि में जल

रही है! यह मनोहर मानसरोवर एवं चन्द्रमा की चन्दन-सदृश चाँदनी भी इस वियोगिनी को दावानल-सदृश दाहकारक प्रतीत हो रही है। जब यह चकवी अपने पति से एक रात के वियोग को सहन करने में असमर्थ हो रही है, तब वह महासुन्दरी अञ्जना किस प्रकार बाईस वर्ष से मेरे वियोग को सहन कर रही होगी! उसकी क्या दशा हुई होगी? अरे! यह वही तो मानसरोवर है, वही तो स्थान है, जहाँ हमारा विवाह हुआ था।' विवाह स्थल पर नजर पड़ते ही कुमार के शोक की अभिवृद्धि हो गयी।

वे सोचने लगे – 'हाय! हाय!! मैं कैसा निष्ठुर चित्त हूँ, मैंने व्यर्थ ही उस निर्दोष का परित्याग कर दिया। कटुवचन तो उसकी दासी ने कहा था, उसने तो कुछ भी नहीं कहा था, तथापि मैंने बिना विचारे दूसरे के दोष से उसका त्याग कर दिया। उस निर्दोष सती को अकारण दु:ख दिया। इतने वर्षों तक उसे वियोगिनी बनाये रखा। हाय! अब मैं क्या करूँ? घर से तो पिताश्री द्वारा विदा प्राप्त कर निकला हूँ, अब वापस भी किस तरह जा सकता हूँ? अरे! बड़े धर्मसंकट में फँस गया हूँ। यदि मैं अञ्जना से मिले बिना संग्राम में जाता हूँ तो निश्चित ही वह मेरे वियोग में प्राण त्याग देगी और उसके अभाव में मेरा अभाव भी सुनिश्चित है। जगत् में जीवन के समान कुछ नहीं है; अत: सर्व सन्देह का निवारण करनेवाले अपने मित्र प्रहस्त से इसका उपाय पूछूँ। वह हर प्रकार से प्रवीण एवं विचारशील है अवश्य ही कोई न कोई मार्ग सुझायेगा। सत्य ही है कि प्रत्येक कार्य को सोच-विचार कर करनेवाला प्राणी निस्सन्देह सुख को प्राप्त करता है।'

इस प्रकार पवनकुमार अन्तर्द्वन्दों में गोते खा रहे थे। वहीं

कुमार को विचारमग्न देखकर, जो कुमार के सुख से सुखी एवं दु:ख से दु:खी हो जाता है –ऐसा मित्र प्रहस्त पूछने लगा –

'हे मित्र! तुम किस चिन्ता में मग्न हो, तुम्हें तो प्रसन्न होना चाहिए कि तुम महाराज रावण की सहायतार्थ वरुण जैसे योद्धा के सन्मुख युद्ध हेतु जा रहे हो। याद रखो, इस समय प्रसन्नता में ही कार्यसिद्धि निहित है। फिर भी आज तुम्हारे मुखकमल की मलिनता का क्या कारण है ? सङ्कोच का परित्याग कर मुझे वस्तुस्थिति से अवगत कराओ। तुम्हें चिन्तामग्न देखकर मुझे व्याकुलता हो रही है।'

पवनकुमार ने कहा – 'हे मित्र! बात ही कुछ ऐसी है, जो किसी से कही नहीं जा सकती। यद्यपि मेरे हृदय की समस्त वार्ता कहने का एकमात्र स्थान तुम्हीं हो, तुममें और मुझमें कुछ भी भेद नहीं है, तथापि यह बात कहते हुए मैं सङ्कोच का अनुभव कर रहा हूँ।'

प्रहस्त कहने लगा – 'हे कुमार! जो तुम्हारे चित्त में हो, वह कहो। जो कुछ तुम मुझसे कहोगे, वह बात सदैव गोपनीय रहेगी – यह वचन है। जैसे गर्म लोहे पर गिरा हुआ जल-बिन्दु शीघ्र ही विलय को प्राप्त हो जाने से दृष्टिगोचर नहीं होता, उसी प्रकार मुझसे कही हुई तुम्हारी बात प्रगट नहीं होगी।'

तब कुमार कहने लगा – 'हे प्रिय! सुनो, मैंने कभी भी अञ्जना के साथ प्रीति नहीं की, इस कारण आज मेरा मन अत्यन्त व्याकुल है। हमारा विवाह हुए बाईस वर्ष व्यतीत होने पर भी, उसे आज तक मेरा वियोग रहा है। वह नित्य ही शोकाकुल हो अश्रुपात करती है। यहाँ आने के समय वह दरवाजे पर खड़ी थी, तब वियोगावस्था में दु:खित उसका चेहरा मैंने देखा था, वह दृश्य अभी भी मेरे मानसपटल पर बाण की भाँति चुभ रहा है। अत: हे

मित्र! यह प्रयत्न करो, जिससे हमारा सम्मिलन सम्भव हो सके, अन्यथा हम दोनों का मरण सुनिश्चित है।'

कुछ देर विचार कर प्रहस्त बोला – 'हे कुमार! तुम माता-पिता की आज्ञा प्राप्त कर युद्ध में शत्रु को परास्त करने निकले हो; अत: वहाँ वापस जाना तो अनुचित है ही; अञ्जना को यहाँ बुलाना भी उचित नहीं है, क्योंकि तुम्हारा व्यवहार आज तक उसके प्रति निराशाजनक रहा है – ऐसी स्थिति में तो यही सम्भव है कि तुम गुप्तरूप से वहाँ जाओ और उसका अवलोकन करके सुख-सम्भाषण कर आनन्दपूर्वक प्रात:काल होने के पूर्व ही वापस यहाँ आ जाओ – ऐसा करने से तुम्हारा चित्त शान्त होगा, परिणामस्वरूप तुम शत्रु पर विजय प्राप्त कर सकोगे।'

इस प्रकार निश्चय कर, सेना की रक्षा का भार सेनापति के सुपूर्द कर, दोनों मित्र मेरु-वन्दना के बहाने आकाशमार्ग से अञ्जना के महल की ओर प्रस्थान कर गये। उस समय कुछ रात्रि व्यतीत हो गयी थी। अञ्जना के महल में दीपक का प्रकाश टिमटिमा रहा था। पवनकुमार के शुभागमन का शुभ समाचार देने हेतु कुमार को बाहर ही छोड़कर प्रहस्त भीतर गया और उसने दरवाजा खटखटाया।

आहट पाकर अञ्जना ने पूछा – 'कौन है ?' फिर समीप ही शयन कर रही सखी बसन्तमाला को जगाया, तब सर्व बातों में निपुण बसन्तमाला, अञ्जना के भय को निवारण करने को उद्यत हुई तथा दरवाजा खोला।

जब प्रहस्त ने नमस्कार करके पवनकुमार के शुभागमन का समाचार अञ्जना को सुनाया तो वह सहसा इस बात पर विश्वास

न कर सकी और यह समाचार उसे स्वप्नवत् ज्ञात हुआ।

गद्‌गद् वाणी द्वारा वह प्रहस्त से कहने लगी – 'हे प्रहस्त! मैं पुण्यहीन, पतिकृपाविहीन हूँ, तुम क्यों मेरा अपमान कर रहे हो? मैं तो पहले ही पापोदय की सताई हुई हूँ, पर अरे रे! पति द्वारा ही जिसका सम्मान न हो, उसकी अवज्ञा भला कौन नहीं करेगा? हाय! मुझ अभागिन को वह सुखद दिन कब प्राप्त होगा? कब मुझे अपने प्राणेश्वर के दर्शन होंगे?'

प्रहस्त ने करबद्ध हो निवेदन किया – 'हे कल्याण रूपिणी! हे पतिव्रता!! मेरा अपराध क्षमा करें। अब आपके अशुभकर्मोदय का समापन हो गया है। आपके निश्चल प्रेम से प्रेरित होकर आपके प्राणनाथ यहाँ पधारे हैं। वे आपसे अत्यन्त लज्जित हैं तथा प्रसन्न भी है, उनकी प्रसन्नता से आपको आनन्द न हो – यह असम्भव है।'

यह बात सुनकर अञ्जना ने अपनी नजरें झुका लीं, तब बसन्तमाला ने प्रहस्त से कहा – 'हे भद्र! मेघ तो जब बरसे, तभी श्रेष्ठ हैं। कुमार इनके महल में पधारे हैं – यह इनका महाभाग्य है, हमारा भी पुण्यरूप वृक्ष विकसित होकर फला है।'

अन्दर इस प्रकार चर्चा चल रही थी कि तभी कुमार भी वहीं आ पहुँचे। उनके नेत्रों से आनन्दाश्रु छलक रहे थे, मानों कल्याणरूपी सखी ही उन्हें यहाँ ले आयी थी।

पति को देखते ही जब अञ्जना ने हाथ जोड़कर विनयपूर्वक उनके चरणस्पर्श किये, तब कुमार ने उसे अपने हाथों से उठाकर इस प्रकार सम्बोधित किया – 'हे देवी! अब सर्व क्लेश एवं दुःखों

का परित्याग कर दो।' – ऐसा कहकर उन्होंने उसे अपने निकट बैठाया, तब प्रहस्त और बसन्तमाला बाहर चले गये।

अपनी भूल के कारण लज्जित पवनकुमार ने बारम्बार अञ्जना सुन्दरी से कुशल समाचार पूछे और कहा – 'हे प्रिय! मैंने व्यर्थ ही तुम्हारा अनादर किया, इसके लिए तुम मुझे क्षमा करो। मैंने अन्यकृत अपराध का तुम पर दोषारोपण किया, अब इन बातों का विस्मरण करो। अपने अपराध की क्षमा हेतु मैं बारम्बार तुमसे याचना करता हूँ, तुम मुझ पर प्रसन्न होओ।' – ऐसा कहते हुए पवनकुमार ने उसके प्रति बहुत स्नेह प्रदर्शित किया।

अपने प्राणनाथ का अपूर्व स्नेह देखकर महासती अञ्जना अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक कहने लगी – 'हे नाथ! मेरे प्रति इस तरह अनुनय-विनय करना आपके लिये अनुचित है। मेरा हृदय तो सदैव आपके ध्यान से संयुक्त ही था, आप तो सदा से ही मेरे हृदय में विराजमान थे। आपके द्वारा प्रदत्त अनादर भी मुझे आदरवत् ही प्रतीत होता था। अब तो आपने मुझ पर अपार कृपा कर अत्यधिक स्नेह प्रदर्शित किया – इसकी मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है। मेरे तो सारे ही मनोरथ सिद्ध हो गये हैं।' इस प्रकार दोनों में परस्पर स्नेहपूर्वक वार्तालाप एवं समागम के साथ रात्रि व्यतीत हुई।

✦ ✦ ✦

प्रात:काल होने के कुछ समय पूर्व ही प्रहस्त ने आकर कुमार से कहा – 'हे मित्र! अब चलने में शीघ्रता करो। अपनी प्राणप्रिया का विशेष सम्मान वापस आकर करना, अभी तो गुप्तरूप से ही वापस सेना में पहुँचना है। मानसरोवर पर अन्य राजागण आदि सभी साथ चलने के लिये तुम्हारा इन्तजार कर रहे होंगे। इतना ही

नहीं; स्वयं महाराज रावण भी अपने मन्त्रियों से तुम्हारे आगमन के विषय में जानकारी प्राप्त करते रहते हैं। अत: अब विलम्ब करना किसी भी तरह उचित नहीं है। आप शीघ्र ही अपनी प्राणप्रिया से विदा लेकर आओ।' इतना कहकर प्रहस्त तो वापस बाहर चला गया।

तब अञ्जना से विदा माँगते हुए पवनञ्जय ने कहा – 'हे प्रिये! अब मैं जा रहा हूँ, तुम चिन्ता मत करना, कुछ दिनों पश्चात् ही मैं वापस आ जाऊँगा, तब तक सानन्द रहना।'

कुमार के वचन सुनकर सती अञ्जना सङ्कोचपूर्वक हाथ जोड़कर इस प्रकार कहने लगी – 'हे प्राणनाथ! अभी मेरा ऋतु समय है; अत: आपके समागम से मेरा गर्भधारण करना अवश्यम्भावी है। यह तो सभी को ज्ञात है कि आज तक मुझ पर आपकी कृपादृष्टि नहीं रही, अत: मेरे हित के लिये आप माता-पिता से अपने आने का वृत्तान्त अवश्य कहते जाएँ।'

पवनकुमार ने कहा – 'हे प्रिये! माता-पिता से तो मैं आज्ञा प्राप्त कर निकला हूँ, अत: अब उनके समीप जाकर यह बात कहते हुए मुझे लज्जा आती है। समस्त लोकजन भी मेरी इस चेष्टा को जान कर हँसी ही करेंगे, किन्तु तुम विश्वास रखो, तुम्हारे गर्भ के चिह्न प्रगट हों, उससे पूर्व ही मैं वापस आ जाऊँगा। तुम अपने चित्त को प्रसन्न रखना। यदि कोई पूछे तो मेरे आगमन की प्रतीकरूप यह मेरे नाम की मुद्रिका एवं हाथ के कड़े रखो, आवश्यकता पड़ने पर ये मेरे आगमन की साक्षी देंगे और तुम्हें भी शान्ति रहेगी' – इस प्रकार मुद्रिका एवं कड़े अञ्जना को सौंपकर कुमार ने विदा ली और जाते-जाते बसन्तमाला को अञ्जना की भले प्रकार सेवा

करने की आज्ञा दी।

यहाँ से निकलकर दोनों मित्र आकाशमार्ग से विमान द्वारा मानसरोवर पर आ पहुँचे।

इस घटना के रहस्य का परिज्ञान कराते हुए गौतम गणधर, राजा श्रेणिक से कहते हैं – 'हे श्रेणिक! इस लोक में कभी उत्तम वस्तु के संयोग से किञ्चित् सुख का प्रतिभास होता है, वह भी क्षणभङ्गुर है और देहधारियों को पापोदय से होनेवाला दुःख भी क्षणभङ्गुर है – इस प्रकार संयोगजन्य सुख-दुःख दोनों ही क्षणभङ्गुर हैं, अतः इनमें हर्ष-विषाद का त्याग करना चाहिए।

हे प्राणियों! यह जिनधर्म ही जीवों को वास्तविक सुख का प्रदाता एवं दुःखरूप अन्धकार का नाशक है, अतः जिनधर्मरूपी सूर्य के प्रताप से मोहरूपी अन्धकार का नाश करो।'

✦ ✦ ✦

३

घरत्यागी..... वनवास

समय पाकर सती अञ्जना के गर्भ के लक्षण प्रगट होने लगे, उसका मुख इस तरह श्वेत हो गया, मानो गर्भ में स्थित हनुमान के उज्ज्वल यश को ही प्रगट कर रहा हो। ऐसे लक्षणों द्वारा सती अञ्जना को गर्भवती जानकर उसकी सास केतुमति पूछने लगी —

'अरी अञ्जना! यह पाप कार्य तूने किसके साथ किया है?'

अञ्जना ने अत्यन्त विनयपूर्वक हाथ जोड़कर पति-आगमन का सम्पूर्ण वृत्तान्त अपनी सास को सुना दिया, किन्तु निष्ठुर हृदयी केतुमति को उस पर तनिक भी विश्वास नहीं हुआ। अत: वह बिना विचारे ही क्रोधावेश में आकर कर्कशवचन कहने लगी —

'रे पापिनी! मेरा पुत्र तो तुझसे इतना विरक्त था कि तेरी छाया तक नहीं देखना चाहता था, तेरी बात तक सुनना उसे पसन्द न था; फिर वह तो हमसे आज्ञा प्राप्त कर रण-संग्राम में गया है, वह तेरे महल में कैसे आ गया? रे निर्लज्ज! तुझ पापिन को धिक्कार है। निन्द्यकर्म करके तूने हमारे उज्ज्वल वंश में कलङ्क लगा दिया है। क्या तेरी इस सखी बसन्तमाला ने तुझे यही बुद्धि सुझायी है।'

सास की क्रूरतापूर्ण बातों को सुनकर अञ्जना ने कुमार द्वारा निशानी के रूप में प्रदान किये गये कड़े एवं मुद्रिका उन्हें दिखायी, तथापि उसकी सास के सन्देह का निवारण न हुआ और अत्यन्त क्रोधपूर्वक उसने एक सेवक को आदेश दिया – 'जाओ! इस दुष्टा को इसकी सखीसहित रथ में बिठाकर महेन्द्रनगर के समीप छोड़ आओ।'

क्रूर केतुमति की आज्ञा पाकर सेवक ने उसका अनुसरण किया और दोनों को रथ में बिठाकर महेन्द्रनगर की ओर प्रस्थान करा दिया। उस समय भयाक्रान्त हो अञ्जना का सारा शरीर काँप रहा था, भय के कारण वह अपनी सास से और कुछ भी न कह सकी। उसकी दशा तो प्रचण्ड पवन के वेग से उखड़ी हुई बेल की भाँति एकदम निराश्रय हो गयी थी। वह बारम्बार अपने अशुभ -कर्मोदय की निन्दा करती थी, उसका चित्त अत्यन्त अशान्त था।

शाम होते-होते रथ महेन्द्रनगर के समीप पहुँच गया। तब सेवक ने अञ्जना से कहा – 'हे देवी! माताजी ने आपको यहाँ तक ही छोड़ने की आज्ञा दी है, उन्हीं की आज्ञा से यह दु:खरूप कार्य मुझे करना पड़ रहा है। मुझे क्षमा कर दें।' – ऐसा कहकर वह सेवक वापस आदित्यपुर नगर की ओर बढ़ गया।

महापवित्र पतिव्रता अञ्जना सुन्दरी को अत्यन्त दु:खी देखकर सूर्य भी मन्द पड़कर अस्त हो गया। रो-रोकर अञ्जना की आँखें लाल हो जाने से मानो पश्चिम दिशा भी लाल रङ्ग में रङ्ग गयी। धीरे-धीरे रात्रि हुई और चारों ओर अन्धकार व्याप्त हो गया। वन्य पशु-पक्षी भी मानो अञ्जना के दु:ख से दुखित हो कोलाहल करने लगे।

अपमानरूप महादु:खसागर में डूबी अञ्जना, भूख-प्यास आदि सब भूल गयी। भयभीत हो रुदन करने लगी। अञ्जना की इस दुखित अवस्था से द्रवित हो, बसन्तमाला उसे धैर्य दिलाती हुई कहने लगी – 'हे बहिन! तुम धैर्य धारण करो। तुम तो आत्मज्ञानी हो, देव-गुरु-धर्म की परम भक्त हो, पवित्रात्मा हो, पतिव्रता हो, तुम्हारे ऊपर यह सङ्कट मुझसे नहीं देखा जाता। हे सखी! तू धैर्य रख, हिम्मत रख! अल्प काल में ही तेरे दु:खों का अन्त होगा। धर्मात्मा जीव पर दीर्घकालीन सङ्कट नहीं रह सकता।' – इस प्रकार धैर्य बँधाकर अञ्जना को सुलाने का प्रयास करने लगी, किन्तु उसकी आँखों में रञ्चमात्र भी निद्रा न थी, उसे एक रात्रि भी एक वर्ष के सदृश लगी।

बसन्तमाला कभी उसे धैर्य दिलाती, कभी पैर दबाती – इस प्रकार जिस-तिस प्रकार उन्होंने रात्रि व्यतीत की।

✦ ✦ ✦

प्रात: काल हो गया था, पक्षी चहुँओर कोलाहल करने लगे थे, सूर्यदेव उदित होने की तैयारी में थे। यहाँ दोनों सखियों ने सर्व प्रथम पञ्च परमेष्ठी भगवन्तों का स्मरण किया। तत्पश्चात् विह्वलतापूर्वक अञ्जनासुन्दरी ने अपने पिता राजा महेन्द्र के महल

की तरफ प्रस्थान किया, बसन्तमाला ने भी छाया की तरह अञ्जना का अनुसरण किया।

राजमहल के दरवाजे पर पहुँचकर जब दोनों ने अन्दर प्रवेश करना चाहा तो द्वारपाल ने उन्हें रोक दिया, क्योंकि दु:ख के कारण अञ्जना का रूप ऐसा हो गया था कि द्वारपाल भी उसे पहिचानने में असमर्थ रहा।

रे संसार! जो कभी राजकुमारी के रूप में उस महल में उछलकूद करती थी, आज वही, उसी महल में जाने पर द्वारपाल द्वारा रोकी गयी। अरे रे! संसार में पुण्य-पाप का चक्र ऐसा ही चलता है।

जब बसन्तमाला ने द्वारपाल को सम्पूर्ण वस्तुस्थिति से अवगत कराया, तब वह दरवाजे पर अन्य व्यक्ति को खड़ा करके स्वयं अन्दर गया और राजा महेन्द्र को अञ्जना के आगमन का समाचार दिया, उसे सुनकर राजा महेन्द्र ने अपने पुत्र प्रसन्नकीर्ति को आदेश दिया कि 'तुम शीघ्र अञ्जना के सन्मुख जाओ और शीघ्र ही उसके नगर प्रवेश की तैयारी कराओ, नगर को सजाओ, मैं अभी आता हूँ।'

राजा की ऐसी आज्ञा सुनकर द्वारपाल ने हाथ जोड़कर कहा – 'हे महाराज! कुमारीजी अकेली ही पधारी हैं, उनके साथ सखी बसन्तमाला के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है और किसी प्रकार का ठाट-बाट भी नहीं है। उनकी सास ने उन पर कलङ्क लगाकर घर

से बाहर निकाल दिया है, वे यहाँ बाहर द्वार पर खड़ी हैं एवं भीतर आने हेतु आपकी अनुमति चाहती हैं।'

पुत्री पर लगे कलङ्क की बात सुनकर राजा महेन्द्र को लज्जा आई और क्रोधित हो अपने पुत्र को आदेश दिया – 'उस पापिनी को शीघ्र ही नगर से बाहर कर दो, उसकी बात सुनते हुए भी मेरे कान फटे जा रहे हैं।'

राजा महेन्द्र की क्रोधपूर्ण आज्ञा को सुनकर उनका अत्यन्त प्रिय सामन्त मनोत्साह आकर कहने लगा – 'हे नाथ! बसन्तमाला से सम्पूर्ण वस्तुस्थिति ज्ञात किये बिना यह आज्ञा देना उचित नहीं है। अपनी अञ्जना उत्तम संस्कारों से संयुक्त एवं धर्मात्मा है, जबकि उसकी सास केतुमति अत्यन्त क्रूर है; इतना ही नहीं, वह तो जैनधर्म से पराङ्मुख एवं नास्तिकमत में प्रवीण है। यही कारण है कि उसने बिना विचारे अञ्जना पर दोषारोपण किया है। अञ्जना तो जैनधर्म की ज्ञाता होने के साथ ही श्रावक के व्रतों की धारक है, धर्माचरण में सदैव तत्पर रहती है। उसकी सास ने तो उसे निष्कासित कर ही दिया, अब यदि आप भी उसे शरण प्रदान नहीं करेंगे तो वह किसकी शरण अङ्गीकार करेगी?'

जिस तरह सिंह से भयभीत हिरण, गहन वन की शरण धारण करता है, उसी प्रकार सास द्वारा प्रताड़ित यह भोली-भाली निष्कपट अञ्जना आपकी शरण में आई है। अभी तो वह दु:खी एवं विह्वल हो रही है; अपमानरूप आताप से उसका अन्त:स्थल संतप्त है, इस समय भी यदि वह आपके आश्रित रहकर शान्ति प्राप्त नहीं करेगी तो कहाँ शान्ति प्राप्त करेगी? द्वारपाल द्वारा रोके जाने के कारण वह अत्यन्त लज्जित होकर राजद्वार पर मुँह ढँककर खड़ी

–खड़ी बिलख रही है। आपके स्नेह के कारण वह सदा आपकी लाडली रही है और केतुमति की क्रूरता तो जगत्प्रसिद्ध है; अत: हे राजन! आप दया करके शीघ्र ही निर्दोष अञ्जना का महल में प्रवेश कराइये।'

— इस प्रकार मनोत्साह सामन्त ने अनेक प्रकार के न्यायपूर्ण वचन कहे, पर राजा ने उन पर किञ्चित भी ध्यान नहीं दिया। जैसे, कमल पत्र पर पानी नहीं ठहरता, उसी प्रकार राजा महेन्द्र के हृदय पर इन न्यायपूर्ण वचनों का कुछ भी प्रभाव नहीं हुआ।

राजा महेन्द्र ने सामन्त से पुन: कहा – 'हे सामन्त! इसकी सखी बसन्तमाल तो सदा से ही इसके साथ रहती आई है, अत: कदाचित् अञ्जना के स्नेहवश वह सत्य बात नहीं कह सकती, तब अपने को यथार्थता का परिज्ञान किस प्रकार संभव है ? अञ्जना का सतीत्व सन्देहास्पद स्थिति में है, अत: उसे शीघ्र ही नगर के बाहर कर दो। यदि यह बात प्रगट हो गयी तो हमारे उज्ज्वल कुल में कलङ्क लग जाएगा। यह बात मैं पूर्व में भी अनेक बार सुन चुका हूँ कि वह सदा ही अपने पति की कृपाविहीन रही है। जब वह उसकी ओर देखता तक नहीं था, तब उसे गर्भोत्पत्ति किस प्रकार सम्भव है ? अत: निश्चित ही अञ्जना दोषी है, उसे मेरे राज्य में जो भी शरण देगा, वह मेरा शत्रु है।' – इस प्रकार कहकर राजा ने अञ्जना को अपने राज–द्वार से बाहर करवा दिया।

सखीसहित दु:ख से सन्तप्त अञ्जना अपने रिश्तेदारों के यहाँ, जहाँ–जहाँ भी शरण प्राप्त करने पहुँची, वहाँ–वहाँ से उसे असफलता ही प्राप्त हुई। यद्यपि सबके मन में उसके प्रति दयारूप भाव थे, तथापि राजाज्ञा के भय से सबने अपने–अपने दरवाजे बन्द

कर लिये थे। वह विचारने लगी – 'अरे रे! जहाँ पिता ने ही मुझे क्रोधित होकर तिरस्कृत कर दिया, वहाँ अन्य की तो बात ही क्या? ये सब तो राजा के अधीन हैं' – इस प्रकार सबके प्रति उदासीन होकर अञ्जना अपनी प्रिय सखी से कहने लगी —

'हे सखी! यहाँ अपना कोई नहीं है। अपने वास्तविक माता-पिता एवं रक्षक तो देव, गुरु और धर्म ही हैं, सदा उन्हीं की शरण है। यहाँ तो सब ही पाषाणचित्त हैं, यहाँ अपना वास सम्भव नहीं है? चलो! अब तो हम वन में ही चलें। जहाँ वीतरागी सन्तों का वास है – ऐसे वन में आत्मसाधनार्थ निवास करेंगे।'

चलो सखी अब वहाँ चलें, जहाँ मुनियों का वास।
आतम का अनुभव करें, वन में करें निवास॥

✦ ✦ ✦

इस प्रकार विचारकर अञ्जना ने अपनी सखीसहित वन की तरफ प्रस्थान कर दिया, जब वह कंकड़-पत्थरों पर चलते-चलते थक गयी तो वहीं बैठकर रुदन करने लगी – 'हाय! हाय!! मैं मन्दभाग्यनी पूर्व पापोदय के कारण महाकष्ट को प्राप्त हुई हूँ, क्या करूँ? किसकी शरण में जाऊँ? कौन करेगा मेरी रक्षा? अरे! माता ने भी मेरी रक्षा नहीं की, वह करती भी क्या? वह भी तो अपने पति के आधीन है। पिताश्री की तो मैं सदा से ही लाडली रही हूँ, वे तो मुझे प्यार से अपनी गोद में बिठाते थे, उन्होंने

भी बिना परीक्षा के ही मेरा निरादर कर दिया। अरे! जिस माता ने नौ माह मुझे अपने गर्भ में धारण किया, मेरा परिपालन किया, वह भी मुझे आश्रय न दे सकी, न यह कह सकी कि इसके गुण-दोष का निर्णय तो करो। अरे! जब मेरे माता-पिता की ही यह स्थिति है, तब दूर के काका, नाना, प्रधान, सामन्त एवं प्रजाजन तो कर ही क्या सकते हैं? इसमें दूसरों का दोष भी क्या है? मैं ही वर्तमान में दुर्भाग्यरूपी समुद्र में गिरी हुई हूँ। कौन जाने, किन अशुभकर्मोदय के कारण प्राणनाथ पधारे एवं यह दुर्दशा हुई? अरे! प्राणनाथ जाते-जाते भी कह गये थे कि तुम्हारे गर्भ के चिह्न प्रगट होने के पूर्व ही मैं पहुँच जाऊँगा। हे नाथ! दयावान होकर भी आपने इस वचन को क्यों नहीं निभाया? अरे! सास ने भी बिना परीक्षा किये ही क्यों मेरा त्याग कर दिया? जिसके शील में सन्देह हो, उसकी परीक्षा के भी तो अनेक उपाय होते हैं। अरे! जब मेरा पापोदय ही ऐसा है, तब कौन शरण हो सकता है?'

इस प्रकार अञ्जना विलाप करने लगी, उसका विलाप सखी से देखा नहीं जा सका, वह भी धैर्य खो बैठी और रोने लगी। दोनों सखियों के करुण क्रन्दन को

सुनकर उनके आस-पास स्थित हिरणियाँ भी आँसू बहाने लगी। इसी दशा में बहुत समय व्यतीत हो गया। तब महा विचक्षण बसन्तमाला, अञ्जना को हृदय से लगाकर कहने लगी – 'हे सखी! तुम शान्त हो जाओ। अधिक विलाप से क्या कार्यसिद्धि होनेवाली है? तुम तो जानती हो कि इस संसार में कोई भी पदार्थ इस जीव के लिए शरण प्रदाता नहीं है, माता-पिता भी शरण नहीं हैं।'

सर्वज्ञ वीतराग देव एवं निर्ग्रन्थ गुरु ही सच्चे माता-पिता हैं और तुम्हारा निर्मल सम्यग्दर्शन ही तुम्हें शरणरूप है। वही तुम्हारा वास्तविक रक्षक एवं इस असार-संसार में एकमात्र सारभूत है। अत: हे सखी! इस तत्त्वज्ञान के चिन्तवन से अपने चित्त को शान्त करो। पूर्वोपार्जित कर्मों के उदयानुसार संयोग-वियोग की दशाएँ तो बनती ही रहती हैं, उसमें हर्ष-शोक क्या करना? स्वर्ग की अप्सरायें जिसे निरखती हैं – ऐसा स्वर्ग का देव भी पुण्य समाप्त होने पर दु:ख प्राप्त करता है। जीव सोचता कुछ है और होता कुछ है; संयोग-वियोग में जीव का कुछ भी अधिकार नहीं है।

जगत् के जीव अपने अभिप्रायानुसार पदार्थों के संयोग -वियोग के लिए प्रयत्नशील होते हैं, परन्तु वस्तुत: संयोग-वियोग का कारण तो पूर्वोपार्जित शुभाशुभ कर्मोदय ही है। प्रियवस्तु का संयोग भी अशुभकर्मोदय के कारण वियोगरूप परिणमित हो जाता है और जिसकी कभी कल्पना भी न की हो – ऐसी वस्तु का संयोग शुभकर्मोदय के फलानुसार सहज ही प्राप्त हो जाता है। यह सब तो कर्मोदय की विचित्रता है। तुम्हारे द्वारा पूर्वोपार्जित कर्मोदयानुसार प्राप्त संयोग-वियोग

तुम्हारे टालने से नहीं टलेंगे, अत: हे सखी! तू वृथा क्लेश न कर, खेद का परित्याग करके अपने मन को धैर्य से दृढ़ कर। तुम स्वयं विज्ञ हो, मैं तुम्हें क्या समझाऊँ? क्या तुम स्वयं नहीं जानती, जो मैं तुम्हें समझा रही हूँ।

इस प्रकार बसन्तमाला ने अत्यन्त स्नेह से अञ्जना को दिलासा दिलाते हुए उसके आँसू पोंछे और उसके शान्त होने पर वह फिर उससे कहने लगी —

'हे देवी! यह स्थान आश्रयरहित है, अत: यहाँ से चलें, उठो! आगे चलते हैं। यदि समीप ही स्थित पहाड़ में जीव-जन्तुओं से रहित कोई गुफा हो तो उसकी खोज करते हैं। तुम्हारे प्रसूति का समय अत्यन्त निकट है, अत: कुछ दिन अत्यन्त सावधानीपूर्वक रहना आवश्यक है।'

सखी के आग्रह से अञ्जना कष्टपूर्वक उसके साथ चलने लगी। वह महा-वन, हाथी और चीतों से भरा हुआ था, सिंह की गर्जना एवं अजगर की फुंफकार से महाभयङ्कर प्रतीत होता था – ऐसे मातङ्ग मालिनी नामक घोर वन में अञ्जना अपनी सखी के साथ धीमे-धीमे पैर रखती हुई बढ़ी जा रही थी।

यद्यपि बसन्तमाला आकाशमार्ग से गमन करने में समर्थ थी, तथापि गर्भ-भार के कारण अञ्जना के चलने में असमर्थ होने से वह भी अञ्जना के प्रेम में बँधी, उसकी छाया के समान उसके साथ-साथ ही चल रही थी।

वन की भयानकता का अवलोकन कर अञ्जना काँप रही थी, भ्रमित हो रही थी, तब बसन्तमाला उसका हाथ पकड़कर कहने लगी – 'अरे मेरी बहन! तू डर मत, मेरे साथ चली आ।'

तब अञ्जना अपनी सखी के कन्धे पर हाथ रखकर, उसके साथ-साथ चल पड़ती। पैरों में कंकड़ एवं काँटे लग जाने के कारण खेदखिन्न हो विलाप करने लगती और बड़ी कठिनता से देह भी सम्भाले रखती, मार्ग में समागत पानी के झरनों को बड़ी कठिनाई से लाँघती, बारम्बार विश्राम लेती, बारम्बार सखी धैर्य बँधाती।

इस प्रकार जैसे-तैसे दोनों सखियाँ पर्वत के समीप आ पहुँची। गुफा यद्यपि पास ही थी, तथापि अञ्जना तो वहाँ तक पहुँचने में भी असमर्थ थी; अतः आँसू बहाते हुए वहीं बैठ गयी और सखी से कहने लगी – 'हे सखी! मैं तो अब थक गयी हूँ, एक कदम भी चलने के लिए मैं समर्थ नहीं हूँ। मैं तो यही बैठी रहूँगी, भले ही मरण हो जाए।'

तब अत्यन्त चतुर बसन्तमाला हाथ जोड़कर अत्यन्त मधुर स्वर में शान्तिप्रदायक वचनों से इस प्रकार कहने लगी – 'हे सखी! देखो! अब गुफा नजदीक ही है, अतः कृपाकर यहाँ से उठो और वहाँ गुफा में निवास करो। यहाँ क्रूर जीवों का विचरण अत्यधिक मात्रा में हैं, अतः गर्भ की रक्षार्थ हठ का परित्याग करो।'

सखी के वचन सुनकर एवं वन की भयङ्करता से भयभीत अञ्जना अत्यन्त कष्टपूर्वक चलने के लिए उद्यमवन्त हुई और सखी के हाथ का सहारा पाकर दोनों गुफा के द्वार तक पहुँच गयीं।

बिना विचारे गुफा में प्रवेश करने से दोनों को ही भय पैदा होने लगा, इस कारण वे बाहर ही बैठ गयीं और ध्यानपूर्वक गुफा के

भीतरी दृश्य का अवलोकन करने लगीं।

गुफा के भीतरी दृश्य पर उनकी दृष्टि पड़ते ही उनके आनन्द का पार न रहा। उन्होंने देखा कि अहो! गुफा में एक मुनिराज ध्यान-निमग्न हैं, वे मुनिराज, चारणऋद्धि के धारक थे, उनका शरीर एकदम निश्चल था, उनकी मुद्रा सागरसम गम्भीर एवं परमशान्त थी, आँखे नासाग्र थी। आत्मा का जो स्वरूप जिनागम में प्रतिपादित किया गया है, उसी के ध्यान में मुनि तल्लीन थे। वे पर्वत-सम अडोल, आकाश-सम निर्मल एवं पवन की भाँति निसङ्ग थे। अहो! आप्रमत्तदशा में झूलते हुए वे मुनिराज, सिद्धसमान निजात्मा की साधना में मग्न थे।

— ऐसे धीर, वीर, गम्भीर, मुनिराज को देखते ही दोनों के हर्ष का पार न रहा। अहा! धन्य-धन्य मुनिराज!! — इस प्रकार कहती हुई, वे दोनों मुनिवर के समीप पहुँचीं और उनकी परमशान्त मुद्रा के दर्शनों को प्राप्त कर अपने सम्पूर्ण दुःखों को भूल गयीं। उन्होंने भक्तिपूर्वक हाथ जोड़कर तीन प्रदक्षिणा देकर मुनिराज को नमस्कार किया। मुनिराज जैसे परम बान्धव के दर्शन से उनके नेत्र प्रफुल्लित हो गये। आँसू रुक गए और नजरें मुनिराज के चरणों में स्थिर हो गयीं। वे दोनों हाथ जोड़कर महाविनयपूर्वक इस प्रकार मुनिराज की स्तुति करने लगीं —

'हे भगवन! हे कल्याणरूप! हे उत्तमध्यान के धारक! हे

नाथ! आप जैसे सन्त तो समस्त जीवों की कुशलता के कारण हैं, अत: आपकी कुशलता के बारे में क्या पूछना? हे नाथ! आप तो संसार का परित्याग कर आत्महित की साधना में मग्न हैं। आप महापराक्रमी, महाक्षमावान हैं, परमशान्ति के धारक हैं, उपशान्तरस में झूलनेवाले हैं, मन और इन्द्रियों के विजेता हैं, आपका समागम जीवों के कल्याण का कारण है।'

— इस प्रकार अत्यन्त विनयपूर्वक स्तुति करके दोनों वहीं बैठ गयीं, मुनिवर के दर्शनों से दोनों का सम्पूर्ण कष्ट दूर हो गया।

मुनिराज का ध्यान पूर्ण होने पर दोनों ने पुन: उन्हें नमस्कार किया, तब स्वयमेव मुनिराज परमशान्त अमृत वचन कहने लगे —

'हे कल्याणरूपिणी! रत्नत्रय धर्म के प्रसाद से हमें पूर्ण कुशलता है। हे पुत्रियों! सभी जीवों को अपने-अपने पूर्वोपार्जित कर्मों के उदयानुसार संयोग-वियोग प्राप्त होते हैं। देखो कर्मों की विचित्रता! यह राजा महेन्द्र की पुत्री, अपराधरहित होने पर भी परिजनों द्वारा तिरस्कृत की गयी है।'

बिना कहे ही सम्पूर्ण वृतान्त जान लेनेवाले उन धीर-वीर-गम्भीर मुनिराज से बसन्तमाला ने पूछा – 'हे नाथ! क्या कारण है कि इसके पति इतने वर्षों से इससे उदास रहे और तत्पश्चात् इसमें अनुरक्त हुए? और किस कारण से यह महासती वन में दु:ख को प्राप्त कर रही है तथा इसके गर्भ में कौन भाग्यहीन जीव स्थित है, जिसके जीवन के प्रति भी सन्देह है। हे प्रभो! कृपा

करके इन प्रश्नों का उत्तर प्रदान कर मेरे सन्देह का निवारण करें।'

बसन्तमाला के प्रश्नों के प्रत्युत्तर स्वरूप अतुलज्ञान के धारक मुनिराज अमितगति सर्व यथार्थ वृतान्त कहने लगे क्योंकि महापुरुष तो सहज ही परोपकारी होते हैं, अतः मुनिराज ने मधुरवाणी से कहा —

'हे पुत्री! अञ्जना के गर्भ में स्थित जीव महापुरुष है। सर्व प्रथम तुम्हें उसी (हनुमान) के पूर्वभवों का ज्ञान कराता हूँ। तुम ध्यानपूर्वक सुनो। तत्पश्चात् अञ्जना पूर्व भव के जिस पापाचरण के फलस्वरूप वर्तमान में दुःखावस्था को प्राप्त हुई है – उसका वृतान्त कहूँगा।'

✦ ✦ ✦

हनुमान के पूर्व भवों का वृतान्त —

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मन्दिरनगर में प्रियनन्दी नामक एक गृहस्थ था, उसके दमयन्त नाम का एक पुत्र था। एक बार वह बसन्तऋतु में अपने मित्रों के साथ वनक्रीड़ा के लिए वन में गया, वहाँ उसने एक मुनिराज को देखा। जिनका आकाश ही वस्त्र था, तप ही धन था और वे निरन्तर ध्यान एवं स्वाध्याय में उद्यमवन्त थे – ऐसे परम वीतरागी मुनिराज को देखते ही दमयन्त अपनी मित्र मण्डली को छोड़कर श्री मुनिराज के समीप पहुँच गया। मुनिराज को नमस्कार कर उनसे धर्मश्रवण करने लगा। मुनिराज के तत्त्वोपदेश से उसने सम्यग्दर्शन की प्राप्ति की और श्रावक के

व्रत एवं अनेक प्रकार के नियमों से सुशोभित होकर घर आया।

तत्पश्चात् एक बार उस कुमार ने दाता के सात गुणसहित मुनिराज को नवधाभक्तिपूर्वक आहारदान दिया और अन्त समय में समाधिपूर्वक देह का परित्याग कर देवगति को प्राप्त हुआ।

स्वर्ग की आयु पूर्ण करके, वह जम्बूद्वीप के मृगांक नगर में हरिचन्द्र राजा की प्रियंगुलक्ष्मी रानी के गर्भ से सिंहचन्द्र नामक पुत्र हुआ। वहाँ भी सन्तों की सेवापूर्वक समाधिमरण ग्रहण कर स्वर्ग गया।

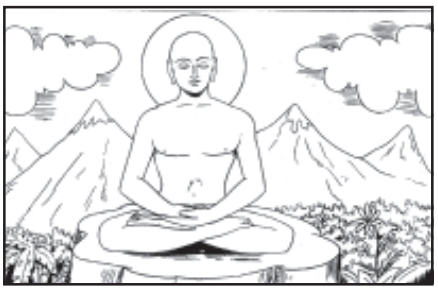

वहाँ पर आयु पूर्ण कर भरतक्षेत्र के विजयार्द्ध पर्वत पर अहनपुर नगर में सुकण्ठराजा की कनकोदरी रानी के यहाँ सिंहवाहन नामक पुत्र हुआ, जो महागुणवान एवं रूपवान था। उसने बहुत वर्षों तक राज्य किया। तत्पश्चात् विमलनाथस्वामी के समवसरण में आत्मज्ञानपूर्वक संसार से वैराग्य उत्पन्न होने पर राज्य का भार अपने पुत्र लक्ष्मीवाहन को सौंपकर, लक्ष्मीतिलक मुनिराज के शिष्यत्व को अङ्गीकार कर लिया, अर्थात् वीतरागदेव कथित मुनिधर्म अङ्गीकार कर लिया और अनित्यादि द्वादशानुप्रेक्षाओं का चिन्तवन करके ज्ञानचेतनारूप हो गया। उसने महान तप किया

और निजस्वभाव में एकाग्रता के बल पर उस स्वभाव में ही स्थिरता की अभिवृद्धि का प्रयन्त करने लगा। तप के प्रभाव से उसे अनेक प्रकार की ऋद्धियाँ प्रगट हो गयीं, उसके शरीर से स्पर्शित पवन भी जीवों के अनेक रोगों को हर लेती थी। अनेक ऋद्धियों से सम्पन्न वे मुनीश्वर निर्जरा के हेतु बाईस प्रकार के परीषहों को सहन करते। इस प्रकार अपनी आयु पूर्ण कर वे मुनिराज ज्योतिष्चक्र का उल्लङ्घन कर लान्तव नामक सप्तम स्वर्ग में महान ऋद्धि से सुसम्पन्न देव हुए।

देवगति में वैक्रियक शरीर होता है; अत: मनवाञ्छित रूप बनाकर इच्छित स्थानों पर गमन सहज ही होता था। साथ ही स्वर्ग का अपार वैभव होने पर भी उस देव को तो मोक्षपद की ही भावना प्रवर्तती थी, अत: वह स्वर्ग सुख में 'जल तैं भिन्न कमलवत्' निवास करता था।

हे पुत्री! वही देव, स्वर्ग से चयकर अञ्जना के गर्भ में आया है, वह चरमशरीरी है, अत: वह पुन: देह धारण नहीं करेगा; परम सुखरूप मोक्षदशा को प्राप्त करेगा। यह उसका अन्तिम भव है।

इस तरह हे कल्याण चेष्टावन्ती! यह तो हुआ उस पुत्र का वृतान्त, जो अञ्जना के गर्भ में स्थित है। अब, अञ्जना का वृतान्त सुनो, जिसके कारण इसे पति का वियोग एवं कुटुम्ब द्वारा तिरस्कृत होना पड़ा।

✦ ✦ ✦

अञ्जना के पूर्वभव

इस अञ्जना ने पूर्वभव में पटरानी पद के अभिमान के कारण अपनी सोत पर क्रोध करके देवाधिदेव श्री जिनेन्द्रदेव की प्रतिमा

को जिनमन्दिर से बाहर निकाल दिया था। उसी समय समयश्री नामक आर्यिका इनके घर पर आहार हेतु पधारी थी, किन्तु जिनप्रतिमा का अनादर देखकर, उन्होंने आहार नहीं किया और प्रस्थान हेतु उद्यत हुई तथा इसे अज्ञानी समझकर अत्यन्त करुणापूर्वक उपदेश देने लगीं। कारण कि साधु तो सभी का कल्याण ही चाहते हैं और जीवों को समझाने के लिए पात्र से बिना पूछे ही गुरु-आज्ञा से धर्मोपदेश हेतु प्रवर्तते हैं। इसी प्रकार शील एवं संयमरूप आभूषण से अलंकृत समयश्री नामक आर्यिका भी अत्यन्त मधुर अनुपम वचनों के द्वारा पटरानी से कहने लगीं —

'अरे भोली ! सुनो ! तुम रूपवती हो, राजा की पटरानी हो और राजा का तुम्हारे प्रति विशेष स्नेह है – यह सब तो पूर्वोपार्जित पुण्य का फल है।

यह जीव, मोह के कारण चतुर्गति में परिभ्रमण करता हुआ, महादु:ख का सेवन करता है। अनन्त काल में कभी महान पुण्योदय के कारण यह मनुष्य देह प्राप्त करके भी जो सुकृत्य नहीं करता, वह तो हाथ में आये हुए रत्न को व्यर्थ ही खो देता है। अशुभ क्रियाएँ दु:ख की मूल हैं; अत: तू निज कल्याणार्थ श्रेष्ठ कार्यों में प्रवर्त – यही उत्तम है।

यह लोक तो महानिंद्य, अनाचार से भरा हुआ है। जो स्वयं इस संसार से तिरते हैं, वे धर्मोपदेश द्वारा अन्य जीवों को भी तारने में निमित्त होते हैं; अत: उनके समान अन्य कोई उत्तम नहीं है, वे कृतार्थ हैं और ऐसे सन्त-मुनियों के जो नाथ हैं, जो सर्व जगत् के भी नाथ हैं – ऐसे धर्मचक्री श्री अरहन्तदेव हैं, जो उनके प्रतिबिम्ब का अविनय करते हैं, वे मूढ़ भव-भव में निकृष्ट गतियों को प्राप्त

करते हैं और भयङ्कर दु:ख को भोगते हैं, जो कि वचन-अगोचर हैं।

यद्यपि श्री वीतरागदेव तो राग-द्वेष विहीन हैं, वे न तो अपने सेवकों से प्रसन्न होते हैं और न अपने निन्दकों से द्वेष करते हैं – वे तो महामध्यस्थ वीतरागभाव को धारण करनेवालें हैं, तथापि जो जीव उनकी सेवा करता है, वह स्वर्ग एवं मोक्षसुख को प्राप्त होता है और उनकी निन्दा करनेवाला नरक-निगोद के दु:खों को प्राप्त करता है क्योंकि जीवों के सुख-दु:ख की उत्पत्ति अपने ही परिणामों से होती है। जैसे, अग्नि इच्छारहित है, तथापि उसके सेवन से शीत का निवारण होता है; उसी प्रकार जिनदेव, इच्छारहित वीतराग हैं, तथापि उनके अर्चन-सेवन से स्वयमेव सुखोपलब्धि होती है और उनके अविनय से दु:खोपलब्धि होती है।

हे पुत्री! इस संसार में दृष्टिगोचर समस्त दु:ख, पाप के ही फल हैं और समस्त सुख, धर्म का ही फल है। पूर्व पुण्योदय के फलस्वरूप तू राजा की पटरानी हुई है, महासम्पत्ति एवं अद्‌भुत कार्यक्षमता से युक्त पुत्र रत्न की प्राप्ति तुझे पूर्व पुण्योदय से हुई है, अत: इस अवसर में तुझे वह कार्य करना चाहिए, जिससे तुझे सुख प्राप्त हो। मेरे इन वचनों को सुनकर तू शीघ्र आत्मकल्याणार्थ तत्पर हो जा! हे भव्य! आँख होते हुए भी कुएँ में गिरने सदृश कार्य तेरे लिए शोभास्पद नहीं कहा जा सकता।

यदि इस अवसर में भी तूने ऐसे घृणास्पद कार्य का परित्याग नहीं किया तो तुझे नरक-निगोद में दु:ख सहन करने पड़ेंगे।

इस प्रकार आर्यिकाश्री के उपदेश से रानी कनकोदरी, नरक के दु:खों से भयभीत हुई और उसने सम्यग्दर्शनसहित श्रावक के व्रत अङ्गीकार कर लिये और श्री जिनेन्द्रदेव की प्रतिमा को अत्यन्त

बहुमानपूर्वक श्री जिनमन्दिर में वापिस विराजमान करवाया तथा महा उत्सवपूर्वक भगवान की पूजा का भव्य आयोजन किया। इस प्रकार सर्वज्ञदेव प्रणीत धर्म की आराधना करके वह पटरानी कनकोदरी स्वर्ग में गयी और स्वर्ग से चयकर राजा महेन्द्र की पुत्री तू अञ्जना हुई है।

श्री मुनिराज कहते हैं – 'हे पुत्री! तूने पूर्व पुण्योदय के कारण राजकुल में जन्म लिया और उत्तम वर को प्राप्त किया है, किन्तु तुमने जिनप्रतिमा को मन्दिर से बाहर निकाल दिया था, उसकी के फलस्वरूप तुम्हें पति वियोग एवं कुटुम्बीजनों द्वारा किया गया तिरस्कार सहना पड़ा।

विवाह के तीन दिन पूर्व पवनञ्जय, अपने मित्र प्रहस्त के साथ गुप्तरूप से तुम्हारे महल के झरोखे पर आकर बैठे थे, उसी समय मिश्रकेशी सखी द्वारा की गयी विद्युतप्रभ की प्रशंसा एवं पवनञ्जय की निन्दा उन्होंने सुन ली थी – इसी कारण पवनकुमार को तुम्हारे प्रति द्वेष हो गया था। तत्पश्चात् युद्ध में प्रस्थान करते समय उन्होंने जब मानसरोवर पर पड़ाव डाला, तब वहाँ एक चकवी को विरहताप से सन्तप्त देखकर, उनका हृदय करुणा से भीग गया और वही करुणा सखीरूप होकर उन्हें तुम्हारे महल तक ले आयी – इस प्रकार तुम्हें गर्भ रहा और राजकुमार ने गुप्तरूप से ही वापस युद्ध हेतु प्रस्थान कर दिया।'

मुनिराज के श्रीमुख से अञ्जना सुन्दरी के लिए सहज ही करुणापूर्ण वचन प्रस्फुटित होने लगे – 'हे बालिके! पूर्व भव में तुमने जिनप्रतिमा का अविनय किया था, वही कारण है कि तुम्हारी पवित्रता को भी कलङ्क का सामना करना पड़ा। पूर्व पापों के

फलस्वरूप ही ऐसे घोर दु:ख को प्राप्त हुई हो, अत: अब कभी इस तरह के निन्द्य कार्य मत करना। अब तो तुम अपने चित्त को संसार-सागर के तारणहार श्री जिनेन्द्रदेव की भक्ति में ही लगाओ, कारण कि जिनेन्द्र भक्ति के फलस्वरूप सर्व दु:खों का सहज ही अभाव हो जाता है।'

इस प्रकार मुनिराज के श्रीमुख से अपने पूर्वभव का वृतान्त श्रवण कर अञ्जना सुन्दरी को बहुत दु:ख हुआ, अत: वह अपने द्वारा किये गऐ पापाचरण की निन्दा करती हुई, बारम्बार पश्चाताप करने लगी।

अञ्जना के अन्तर्द्वन्द से परिचित मुनिराज उससे कहने लगे – 'हे पुत्री! तू शान्त होकर निज शक्ति अनुसार जिनधर्म का सेवन कर। परमभक्तिपूर्वक श्री जिनेन्द्रदेव एवं अन्य सन्त धर्मात्माओं की सेवा कर-उपासना कर। तेरे द्वारा पूर्व काल में किए गये अधोकर्म का फल यद्यपि तुझे अधोगति की प्राप्ति के रूप में प्राप्त होता, परन्तु समयश्री आर्यिका ने धर्मदशारूपी हस्तावलम्बन प्रदान कर तुझे कुगति-गमन से बचा लिया। कुछ ही दिनों पश्चात् तुम्हें परमसुख प्राप्त होगा। तेरा पुत्र, देवों से भी जीता न जा सके – ऐसा पराक्रमी होगा और कुछ ही दिनों पश्चात् तुम्हें अपने पति का संयोग प्राप्त होगा। अत: हे भव्य! तू अपने चित्त के क्षोभ का परित्याग कर और प्रमादरहित होकर, धर्मकार्य में तत्पर बन।'

मुनिश्री के अमृतमयी वचनों को सुनकर दोनों सखियों को महान हर्ष हुआ, उनके नेत्र आनन्दाश्रु बरसाने लगे।

'अहो! इस घनघोर वन में आप धर्मपिता हमें प्राप्त हुए, आपके दर्शन से हमारे दु:ख दूर हुए, हे प्रभो! आप ही परमशरणभूत हैं।'

इस प्रकार महाविनयपूर्वक स्तुति करती हुई दोनों सखियाँ बारम्बार मुनिवर के चरणों में नमन करने लगीं। मुनिश्री भी उन्हें धर्मामृत पान कराकर आकाशमार्ग से गमन कर गये।

अञ्जना अपने पूर्वभव के प्रसङ्गों से परिचित होकर पाप से भयभीत होती हुई, धर्म में तत्पर हो गयी। 'मुनिराज के निवास से यह गुफा पावन हुई है।' – ऐसा विचार कर दोनों सखियाँ वहीं रहने लगीं एवं पुत्र-जन्म का इन्तजार करने लगीं।

इस प्रकार सखीसहित गुफा में निवास कर रही अञ्जना सती, धर्म के चिन्तवन, वैराग्य-भावनाओं के मनन एवं देव-गुरु -धर्म की भक्तिपूर्वक समय व्यतीत करने लगी तथा बसन्तमाला, विद्याबल से खान-पानादि की समुचित व्यवस्था करती रही।

उसी गुफा में श्री मुनि-सुव्रतनाथ की प्रतिमा थी, अत: दोनों सखियाँ भक्तिपूर्वक उत्तम द्रव्यों से जिनदेव की पूजन करतीं, साथ ही बसन्तमाला सदा अनेक प्रकार के विनोद से अञ्जना को प्रसन्न रखने का प्रयत्न करती।

बस! एकमात्र यही चिन्ता दोनों के अन्त:स्थल में थी कि प्रसूति सुखपूर्वक सम्पन्न हो जाए।

✦ ✦ ✦

दिन अस्त हुआ, सांझ का लाल रङ्ग ऐसा छा गया मानो, अभी

क्रोध से युक्त सिंह आयेगा और थोड़ी ही देर में उपसर्ग होगा – ऐसी सूचना देती हुई अन्धियारी रात्रि भी आ पहुँची। भययुक्त पशु-पक्षी शान्त हो गये, कभी-कभी अचानक सियारों की चीखें सुनायी देतीं, मानो आनेवाले उपसर्ग के ढोल बज रहे हों।

— ऐसी अन्धियारी रात्रि में वे दोनों सखियाँ उस गुफा में बैठी वार्तालाप कर रहीं थीं कि तभी भयङ्कर गर्जना करता हुआ एक सिंह गुफा द्वार पर आ पहुँचा। उसकी गर्जना से सारी गुफा तो ऐसे गूँज उठी मानो भयाक्रान्त पर्वत ही रुदन कर रहा हो।

सिंह की भयानक गर्जना सुनकर अञ्जना ने प्रतिज्ञा की कि इस उपसर्ग में मेरा अनशन व्रत है। सखी बसन्तमाला, अञ्जना की रक्षा करने के लिए अत्यन्त व्याकुलतापूर्वक हाथ में तलवार लेकर आस-पास घूमने लगी, दोनों सखियाँ भयाक्रान्त हो गयीं।

तभी उस गुफा में निवास कर रहे मणिचूलनामक गन्धर्वदेव की रत्नचूला नामक स्त्री ने उससे कहा – 'हे देव! देखो! ये दोनों स्त्रियाँ सिंह के भय से अत्यन्त विह्वल हो रही हैं, ये दोनों धर्मात्मा हैं; अत: इनकी रक्षा करना आपका कर्तव्य हैं।'

गन्धर्वदेव का हृदय भी दया से द्रवित हो गया, अत: उसने शीघ्र ही विक्रिया द्वारा अष्टापद का रूप धारण कर लिया। तत्पश्चात् सिंह और अष्टापद के युद्ध की भयङ्कर गर्जना चहुँओर फैलने लगी।

इधर गुफा में अञ्जना तो जिनदेव के ध्यान में निमग्न थी और बसन्तमाला सारस की भाँति इस तरह विलाप कर रही थी – 'हाय अञ्जना! पहले तो पति-वियोग से तू दु:खी हुई, किसी प्रकार पति समागम का सुख प्राप्त हुआ और गर्भ रहा तो सास ने बिना विचारे तुझ पर मिथ्या कलङ्क लगाकर घर से निष्कासित कर

दिया। माता-पिता ने भी आश्रय देने से इन्कार कर दिया। इस महाभयङ्कर वन में शरण प्राप्त की, यहाँ महान पुण्योदय से मुनिराज के दर्शन प्राप्त हुए, मुनिवर ने पूर्वभव बताकर धैर्य बँधाया, धर्मामृत पान कराया एवं गमन कर गये। प्रसूति के लिए तू इस गुफा में आयी तो अब यह सिंह भक्षण करने के लिए तैयार खड़ा है। हाय! हाय!! यह राजपुत्री निर्जनवन में मरण को प्राप्त हो रही है। अरे! इस वन के देवताओं! दया करके इसकी रक्षा करो।

अरे! मुनिराज ने तो कहा था कि अञ्जना, अब तेरे सर्व दु:ख दूर होंगे, तब ये मुनि के वचन अन्यथा किस प्रकार हो सकते है ?'

इस प्रकार विलाप करती हुई बसन्तमाला झूले की तरह कभी अञ्जना के पास जाती तो कभी गुफा द्वार पर आती।

इधर गुफा से बाहर अष्टापदरूपधारी गन्धर्वदेव ने अपने पञ्जों के प्रहार से सिंह को घायल करके भगा दिया और स्वयं अपने स्थान पर चला गया। इस प्रकार एक ही क्षण में सिंह एवं अष्टापद दोनों ही विलीन हो गये।

सिंह और अष्टापद के युद्ध का स्वप्नवत् विचित्र चरित्र देखकर बसन्तमाला को बहुत आश्चर्य हुआ। उपसर्ग दूर हुआ जानकर वह गुफा में अञ्जनासुन्दरी के समीप आयी और अत्यन्त कोमल हाथ फैरते हुए उसे आश्वासन प्रदान करने लगी। मानो उसका नया जन्म हुआ हो – इस प्रकार हितकारक वार्ता करने लगी।

गुफा में ही बैठी हुई कभी तो वे धर्मकथा करतीं तो कभी भगवान की भक्ति करतीं; कभी मुनिराज को याद करतीं तो कभी याद करती कुटुम्बीजनों के बर्ताव को – इस प्रकार अर्धरात्रि व्यतीत हो गयी...।

तभी अचानक उनके कान में सङ्गीत का अत्यन्त मधुर स्वर सुनाई देने लगा। ऐसी मध्यरात्रि में सुनसान गुफा में जिनेन्द्रभक्ति की मधुर झंकार को सुनकर दोनों का आश्चर्यचकित होना स्वाभाविक ही था। वे दोनों एकाग्रचित्त से उस मधुर भक्तिरस का पान करने लगीं।

जैसे गरुड़, सर्प को भगा देता है; इसी प्रकार अष्टापद रूपधारी गन्धर्वदेव सिंह को भगाकर रात्रि के शान्त वातावरण में आनन्दपूर्वक वीणा बजाकर श्री जिनेन्द्रदेव का गुणगान कर रहा था। गन्धर्वदेव, गान विद्या में प्रसिद्ध होते हैं, राग के उनपचास स्थानों में वे भी प्रवीण होते हैं।

गन्धर्वदेव द्वारा की गयी भगवान की स्तुति का सार इस प्रकार है —

'मैं सर्वज्ञ परमात्मा श्री अरिहन्तदेव को अत्यन्त भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ। जो देवों के द्वारा भी पूज्य हैं – ऐसे देवाधिदेव श्री मुनिसुव्रतनाथ के चरणयुगल में अत्यन्त भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ। हे भगवान! आप त्रिभुवन में श्रेष्ठ मुक्तिमार्ग के नेता हैं। आपके चरणों के नख की प्रभा से इन्द्र के मुकुट के रत्न प्रकाशित होते हैं। हे सर्वज्ञदेव! आप ही जीवों को परम शरणभूत हैं।'

इस प्रकार जिनेन्द्रप्रभु की अद्‌भुत भक्ति सुनकर दोनों सखियों का हृदय अत्यन्त प्रसन्न हुआ। अपूर्व राग सुनने के कारण उन्हें विस्मय भी हुआ। गीत की प्रशंसा करती हुई वे कहने लगीं – 'धन्य है, यह गीत; लगता है, जिनेन्द्रदेव के किसी अनन्य भक्त ने यह गीत गाया है, जिसे सुनकर हमारा हृदय रोमाञ्चित हो गया है।'

बसन्तमाला अञ्जना से कहने लगी – 'हे सखी ! अवश्य ही यहाँ किसी दयावान देव का निवास है, जिसने पहले तो अष्टापद का रूप धारणकर सिंह को भगाकर आपकी रक्षा की और फिर आपके आनन्द के लिए यह मनोहर गीत गाया है।

हे देवी ! हे शीलवती ! ! तुम्हारी तो सभी रक्षा करते हैं। शीलवन्त धर्मात्माओं के तो भयङ्कर वन में देव भी मित्र बन जाते हैं – इस उपसर्ग के निवारण से यह स्पष्ट विदित होता है। शीघ्र ही तुम्हें अपने पति का समागम प्राप्त होगा और महापराक्रमी पुत्ररत्न प्राप्त होगा क्योंकि मुनिराज के वचन कदापि अन्यथा नहीं हो सकते।'

इस प्रकार चर्चा–वार्ता से दोनों ने रात्रि व्यतीत की। प्रात:काल होने पर दोनों सखियों ने उठकर सर्व प्रथम गुफा में विराजमान श्री मुनिसुव्रतनाथ के जिनबिम्ब की अतिशय भक्तिपूर्वक पूजा –वन्दना की, तत्पश्चात् अञ्जना के चित्त को प्रसन्न करती हुई बसन्तमाला कहने लगी —

'हे देवी ! देखो तो तुम्हारे यहाँ आने से पर्वत एवं वन भी हर्षित हो उठे हैं – यही कारण है कि झरनों के कल–कल नाद से वे भी मुस्कुरा रहे हैं, वन के वृक्ष नम्रीभूत होकर अपने फल मानों तुम्हें ही समर्पित कर रहे हैं। मोर, तोता एवं मैना मानों सुन्दर स्वर में तुम्हारा ही अभिनन्दन कर रहे हैं।

अत: हे कल्याणरूपिणी ! हे पुण्यवन्ती ! तुम चिन्ता का परित्याग कर प्रसन्न रहो। यहाँ अपने को किसी भी प्रकार से भयभीत नहीं होना चाहिए। देव भी तुम्हारी सेवार्थ तत्पर हैं। तुम्हारा शरीर निष्पाप है, तुम्हारा शील निर्दोष है – यही कारण है कि ये पक्षी भी तुम्हारी

प्रशंसा कर रहे हैं। तुम्हारे यहाँ निवास से सारा ही वन प्रफुल्लित हो उठा है। देखो! देखो!! स्वयं सूर्य भी तुम्हारे दर्शनों के लिए उदित हो रहा है।'

बसन्तमाला की प्रसन्नतावर्धक वार्ता का श्रवण कर अञ्जना कहने लगी – 'हे सखी! जब तू मेरे साथ है तो सारा कुटुम्ब ही मेरे साथ है, तेरे प्रसाद से तो यह वन भी मेरे लिए नगर समान है। सच्चा बन्धु तो वही है, जो सङ्कटकालीन परिस्थिति में सहायता करे। दुःख दातार, बन्धु नहीं हो सकता। हे सखी! इस सङ्कटकालीन समय में तेरे सामीप्य से मेरा सर्व दुःख विस्मृत हो गया है।'

इस प्रकार प्रेमपूर्वक वार्तालाप करती हुई वे दोनों सखियाँ उस गुफा में निवास कर रही थीं। दोनों मुनिसुव्रतनाथ प्रभु की प्रतिदिन पूजा-अर्चना करतीं और बसन्तमाला विद्याबल से खान-पान की सब सामग्री एकत्रित कर विधिपूर्वक भोजन बनाती थी। गुफावासी गन्धर्वदेव उनकी हर प्रकार से रक्षा करता था और बारम्बार विविध रागों से जिनदेव की स्तुतियाँ सुनाता था; इतना ही नहीं, वनवासी हिरणादि पशु भी उन दोनों सखियों से हिल-मिल गये थे।

इस प्रकार दोनों का समय व्यतीत हो रहा था।

✦ ✦ ✦

४

हनुमानजी का जन्म

इसी प्रकार कितने ही दिन व्यतीत हो गये। अञ्जना के प्रसूति का समय निकट था, अत: वह अपनी सखी से कहने लगी – 'हे सखी! मैं कुछ व्याकुलता अनुभव कर रही हूँ।'

उसकी बात सुनकर बसन्तमाला ने कहा – 'हे देवी! तुम्हारे प्रसूति का समय निकट है, अत: तुम चिन्ताओं का परित्याग कर आनन्दित होओ' – ऐसा कहकर उसने अञ्जना के लिए कोमल शैय्या का निर्माण कर दिया।

जैसे, पूर्व दिशा सूर्य को प्रगट करती है, उसी तरह अञ्जना ने सूर्यसम् तेजस्वी हनुमान को जन्म दिया। उसका जन्म होते ही गुफा में व्याप्त अन्धकार विलय हो गया और वहाँ प्रकाश का साम्राज्य हो गया। ऐसा लगता था मानो वह गुफा ही सुवर्ण -निर्मित हो।

अपने पुत्र को छाती से लगाकर दीनतापूर्ण स्वर में अञ्जना कहने लगी – 'हे पुत्र! इस गहन वन में तू उत्पन्न हुआ है, अत: मैं तेरा जन्मोत्सव किस प्रकार मनाऊँ? यदि तेरा जन्म तेरे दादा या नाना के यहाँ होता तो निश्चित ही उत्साहपूर्ण तेरा जन्मोत्सव मनाया जाता। अहो! तेरे मुखरूपी चन्द्र को देखकर कौन आनन्दित न होता? किन्तु मैं भाग्यहीन, सर्ववस्तु विहीन हूँ, अत: जन्मोत्सव का आयोजन करने में असमर्थ हूँ। हे पुत्र! अभी तो मैं तुझे यही

आशीर्वाद देती हूँ कि तू दीर्घायु हो, कारण कि जीवों को अन्य वस्तुओं की प्राप्ति की अपेक्षा दीर्घायु होना दुर्लभ है।

हे पुत्र! यदि तू है तो मेरे पास सब कुछ है। इस महान गहन वन में भी मैं जीवित हूँ – यह भी तेरा ही पुण्य प्रताप है।'

अञ्जना के इन वचनों को सुनकर बसन्तमाला कहने लगी – 'हे देवी! तुम प्रसन्न होओ। तुम कल्याणमयी हो, तभी तो ऐसे महान पुत्ररत्न की प्राप्ति तुम्हें हुई है। तेरा पुत्र सुन्दर लक्षणों से सुशोभित है, यह महाऋद्धि का धारक होगा।'

मुनिराज का वह वचन याद करके कि 'यह पुत्र चरमशरीरी है' – इस पुत्र के जन्म से तो निश्चित् ही तेरी कोख पवित्र हो गयी है। यह बालक तेजस्वी है, इसके प्रभाव से सब अच्छा ही होगा, अत: तू व्यर्थ चिन्ता का परित्याग कर एवं पुत्र का अवलोकन करके आनन्दित हो।

देख! यह वन भी तेरे पुत्र का जन्मोत्सव मना रहा है। वृक्ष एवं पुष्प भी पुलकित होकर मुस्करा रहे हैं, बेलें हर्ष में डोल रही हैं, मयूर नृत्य एवं भँवरे मधुर गुँजार कर रहे हैं, हिरण भी वात्सल्य से तेरे पुत्र का अवलोकन कर रहे हैं – इस प्रकार तेरे पुत्र के जन्मोत्सव से तो सारा वन ही प्रफुल्लित हो गया है।'

दोनों सखियों में इस प्रकार परस्पर वार्तालाप चल ही रहा था कि तभी बसन्तमाला ने आकाशमार्ग से सूर्यसम तेजस्वी एक विमान आता हुआ देखा। इसकी सूचना उसने अपनी स्वामिनी अञ्जना को दी।

विमान दृष्टिगोचर होते ही अञ्जना भयभीत हो शङ्काशील हो

गयी और जोर से पुकारने लगी – 'अरे! यह कोई शत्रु निष्कारण ही मेरे पुत्र का अपहरण करने आया है या कोई मेरा हितैषी है?'

अञ्जना की उक्त पुकार सुनकर विमान में विद्यमान विद्याधर को दया उत्पन्न हो गयी, अत: उसने अपने विमान को गुफा द्वार के समीप उतार दिया और विनयपूर्वक पत्नीसहित गुफा में प्रवेश किया।

निर्मल चित्तधारी विद्याधर को गुफा में प्रवेश करते देखकर बसन्तमाला ने उसका यथोचित आदर-सत्कार किया। कुछ देर तक तो विद्याधर मौनपूर्वक बैठा रहा, तत्पश्चात् गम्भीरवाणी में उसने बसन्तमाला से पूछा – 'हे बहिन! सुमर्यादाधारक यह स्त्री कौन है? इसके पिता एवं पति का क्या परिचय है? यह तो किसी बड़े घर की लगती है, फिर भी कुटुम्बीजनों से बिछुड़ कर इसके वन-निवास का क्या कारण है? जगत् में राग-द्वेषरहित उत्तम जीवों के भी पूर्व कर्मोदय के फलानुसार बिना कारण जीव शत्रु बन जाते हैं। यह तो धर्मात्मा ज्ञात होती है, इस पर इस सङ्कट का कारण क्या है?'

विद्याधर द्वारा स्नेहपूर्वक पूछे गये प्रश्नों के प्रत्युत्तरस्वरूप बसन्तमाला दु:ख से रुँधे हुए स्वर में कहने लगी – 'हे महानुभाव! आपके वचनों द्वारा ही आपके मन की पवित्रता ज्ञात हो रही है। जैसे दाह-नाशक चन्दन के वृक्ष की छाया भी प्रिय प्रतीत होती है, इसी तरह आप जैसे गुणवान पुरुषों की छाया भी हृदय के भाव प्रगट करने का स्थान है। आप जैसे महानुभाव के समक्ष दु:ख निरूपण करने से दु:ख निवृत्त हो जाता है, आप दु:ख-हर्त्ता हैं, कारण कि आपदाओं में सहायता करना तो सज्जनों का स्वभाव ही

है। आपने हमारा दु:ख सुनने की अभिलाषा व्यक्त की है, अत: मैं सुनाती हूँ, आप ध्यानपूर्वक सुनिये —

इस स्त्री का नाम अञ्जना है, यह भूतल पर प्रसिद्ध महेन्द्र राजा की पुत्री है एवं राजा प्रहलाद के पुत्र पवनञ्जय इसके पति हैं।'

तत्पश्चात् बसन्तमाला ने पवनकुमार के अप्रिय प्रसङ्ग एवं युद्ध से वापस आना, सास द्वारा घर से निष्कासित करना इत्यादि सर्व प्रसङ्गों का ज्यों का त्यों वर्णन करते हुए कहा – 'हे महानुभाव! यह अञ्जना सर्व दोष परिमुक्त, सती, शीलवन्ती एवं निर्विकार है, धर्मात्मा है। यहाँ रहकर मैं भी इसकी सेवा करती हूँ, मैं इसकी आज्ञाकारिणी सेविका एवं विश्वासपात्र सखी हूँ, मुझ पर इसकी विशेष कृपादृष्टि है। आज ही गुफा में इसने बालक का जन्म दिया है। अनेक भयों से युक्त इस वन में कौन जाने किस तरह इसे सुख प्राप्त होगा? – हे राजन्! यह हमारे दु:ख का संक्षिप्त वृतान्त है; सम्पूर्ण दु:ख तो अकथनीय है।'

इस प्रकार अञ्जना के दु:खरूपी आताप से पिघलकर बसन्तमाला के हृदय में स्थित स्नेह, वचनों द्वारा अभिव्यक्त हो गया।

बसन्तमाला द्वारा कथित अञ्जना की करुण-कथा सुनकर विद्याधर राजा अत्यन्त स्नेहपूर्वक कहने लगा – 'हे भव्यात्मा! मैं हनुमत द्वीप का राजा प्रतिसूर्य हूँ और यह अञ्जना मेरी भानजी (बहिन की पुत्री) है। बहुत दिनों पश्चात् मैंने इसे देखा है, अत: पहिचान नहीं सका हूँ।'

— ऐसा कहकर राजा प्रतिसूर्य, अञ्जना के बाल्यावस्था का सम्पूर्ण वृतान्त गद्गद्वाणी से सुनाते हुए अश्रुपात करने लगे। अञ्जना भी उन्हें अपना मामा समझकर रुदन करने लगी। ऐसा

लगता था, मानो आँसुओं के बहाने उसका सम्पूर्ण दु:ख ही बह रहा हो। यह लौकिक रीति है कि दु:ख प्रसङ्ग में अपने हितैषी को देखते ही अनायास रोना आ जाता है। यही स्थिति उस समय उस गुफा में हो रही थी।

अञ्जना रुदन कर रही थी तो मामा-मामी एवं बसन्तमाला के नयन भी अश्रुओं की धारा बहा रहे थे। उन चारों के रुदन से गुफा इस तरह गूँज रही थी, मानो पर्वत एवं झरने भी रुदन कर रहे हों। रुदन की ध्वनि से सारा वन गूँज उठा था। ऐसा लगता था, मानो सारा वन रुदन कर रहा हो और तो और वनवासी हिरणादि पशु भी उनके रुदन में शामिल हो गये थे।

कुछ देर पश्चात् राजा प्रतिसूर्य शान्त हुए और उन्होंने अञ्जना को भी शान्त किया, उस समय वन भी शान्त हो गया, मानो वह भी उनकी वार्ता सुनने को उत्साहित हो।

सर्व प्रथम तो अञ्जना, प्रतिसूर्य की रानी, अर्थात् अपनी मामी के साथ बातचीत करने लगी। महापुरुषों की यही विशेषता है कि वे दु:ख में भी अपने कर्तव्य से चलित नहीं होते।

तत्पश्चात् अञ्जना अपने मामा से कहने लगी – 'हे पूज्य! आप इस पुत्र का सम्पूर्ण वृतान्त ज्योतिषियों से पूछें।'

तब अपने साथ समागत ज्योतिषी से राजा ने वृतान्त जानने की इच्छा जाहिर की तो उसके उत्तर में ज्योतिषी कहने लगा – 'इस बालक का जन्म समय क्या है – यह बताओ ?'

'आज ही अर्द्धरात्रि व्यतीत होने के पश्चात् इसका जन्म हुआ है' – बसन्तमाला ने कहा।

तब लग्न स्थापित कर एवं बालक के शुभलक्षणों को पहिचानकर ज्योतिषी ने कहा – 'यह बालक तो तद्भव मोक्षगामी है। यह इसका अन्तिम जन्म है, अर्थात् दूसरा जन्म यह धारण नहीं करेगा। इसकी जन्म तिथि फाल्गुन कृष्णा अष्टमी तथा नक्षत्र श्रावण है और सूर्य-चन्दादि समस्त गृह उत्तम स्थानों में सुस्थित हैं, बलवान है, ब्रह्मयोग है तथा शुभमुहूर्त है; अतः निश्चित ही यह बालक अद्भुत राज्य प्राप्त करेगा, साथ ही मुक्तिप्रदाता योगीन्द्रपद भी प्राप्त करेगा – इस प्रकार राजेन्द्र एवं योगीन्द्र दोनों पद प्राप्त कर अविनाशी सुख को प्राप्त करेगा।'

ज्योतिषी की बात सुनकर सबको अत्यन्त हर्ष हुआ।

कुछ देर पश्चात् राजा प्रतिसूर्य ने अञ्जना से कहा – 'हे पुत्री! चलो, अब हम सब अपने राज्य हनुमत द्वीप के लिए प्रस्थान करते हैं। वहाँ पहुँच कर इस पुत्र के जन्मोत्सव का विशाल आयोजन करना है।'

अञ्जना ने राजन् के कथन को स्वीकार कर सर्व प्रथम गुफा में विराजमान भगवान जिनेन्द्र की भावपूर्ण वन्दना की, पश्चात् पुत्र को गोद में लिया, तत्पश्चात् गुफा के अधिपति गन्धर्वदेव से क्षमायाचना कर प्रतिसूर्य के परिवार के साथ गुफा द्वार से बाहर निकल आई और विमान के समीप पहुँचकर खड़ी हो गयी, उसे जाते देखकर मानो सम्पूर्ण वन ही उदास हो गया, वन के पशु हिरणादि भी भीगी पलकों से विदा करते हुए टुकुर-टुकुर उसे निहारने लगे... गुफा, वन एवं पशुओं पर एक बार स्नेहभरी दृष्टि डालकर सखीसहित अञ्जना विमान में बैठ गयी।

✦ ✦ ✦

विमान आकाशमार्ग में जा रहा था। अञ्जना सुन्दरी की गोद में बालक खेल रहा है, सभी विनोद कर रहे हैं कि तभी अचानक कौतूहल से हँसते-हँसते, वह बालक माता की गोद से उछलकर नीचे पर्वत पर जा गिरा। बालक के गिरते ही उसकी माता (अञ्जना) हाहाकार करने लगी। राजा प्रतिसूर्य ने तत्काल विमान को पृथ्वी पर उतार दिया।

अञ्जना के दीनतापूर्वक विलाप के स्वर सुनकर जानवरों के हृदय भी करुणा से द्रवित हो उठे – 'हे पुत्र! यह क्या हुआ? अरे! यह भाग्य का खेल भी कितना निराला है, पहले तो मुझे रत्नों से परिपूर्ण निधान बताया और पश्चात् मेरे रत्न का ही हरण कर लिया। हा! कुटुम्ब के वियोग से व्याकुलित मुझ दुखिया का यह पुत्र ही तो एकमात्र सहारा था, यह भी मेरे पूर्वोपार्जित कर्मों ने मुझसे छीन लिया। हाय पुत्र! तेरे बिना अब मैं क्या करूँगी?'

इस प्रकार इधर तो अञ्जना विलाप कर रही थी और उधर पुत्र हनुमान जिस पत्थर की शिला पर गिरा था, उस पत्थर के हजारों टुकड़े हो गये थे, जिसकी भयङ्कर आवाज को सुनकर राजा प्रतिसूर्य ने वहाँ जाकर देखा तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

क्या देखा उन्होंने? उन्होंने देखा कि बालक तो एक शिला पर आनन्द से मुँह में अपना अगूँठा लेकर स्वत: ही क्रीड़ा कर रहा है,

मुख पर मुस्कान की रेखा स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही है, अकेला पड़ा-पड़ा शोभित हो रहा है। अरे! जो कामदेव पद का धारक है, उसके शरीर की उपमा किससे दी जावे, उसका शरीर तो सुन्दरता में अनुपम होगा ही।

दूर से ही बालक की ऐसी दशा देखकर राजा प्रतिसूर्य को अपूर्व आनन्द हुआ। जिसने अपने प्रताप से पर्वत के खण्ड-खण्ड कर दिये, जिसका आत्मा धर्म से युक्त है और जिसका शरीर तेजस्वी है – ऐसे निर्दोष बालक को आनन्द से क्रीड़ा करते हुए देखकर अञ्जना को भी अपूर्व आनन्द हुआ। उसने अत्यन्त स्नेहपूर्वक उसके सिर का चुम्बन किया और छाती से लगा लिया।

इस आश्चर्यकारी दृश्य से हर्षित हो राजा प्रतिसूर्य, अञ्जना से कहने लगे – 'हे पुत्री! तुम्हारा यह पुत्र उत्तम संस्थान एवं उत्तम संहनन का धारक है, वज्रकाय है, तभी तो इसके गिरने से पर्वत के खण्ड-खण्ड हो गये हैं। जब बाल्यवस्था में ही इसकी शक्ति देवों से अधिक है, तब यौवनावस्था में इसका पराक्रम कितना होगा? अब, यह तो निश्चित् ही है कि यह जीव चरमशरीरी है, तद्भव मोक्षगामी है, पुनः देह धारण का कलंक इसको नहीं लगेगा, यह तो इसी भव में अशरीरी सिद्ध पद प्राप्त करेगा।'

इतना कहकर राजा प्रतिसूर्य ने अपनी पत्नीसहित बालक की तीन प्रदक्षिणा की तथा हाथ जोड़कर सिर झुकाकर नमस्कार किया। तत्पश्चात् पुत्रसहित अञ्जना को अपने विमान में बैठाकर अपने नगर की ओर प्रस्थान किया।

✦ ✦ ✦

राजा के शुभागमन के शुभ समाचारों को सुनकर प्रजाजनों ने

नगर का शृङ्गार किया और राजासहित सभी का भव्य स्वागत किया। अत्यन्त उत्साहपूर्ण वातावरण में पुत्रसहित अञ्जना एवं राजा प्रतिसूर्य ने नगर में प्रवेश किया। दशों दिशाओं में वादित्र के नाद से उन विद्याधरों ने पुत्र जन्म का भव्य महोत्सव मनाया। जैसा उत्सव स्वर्गलोक में इन्द्र जन्म का होता है, उससे किसी भी तरह यह उत्सव कम नहीं था।

पर्वत में (गुफा में) जन्म हुआ और विमान से गिरने पर पर्वत खण्ड-खण्ड हो गया, अत: उस बालक की माता एवं मामा ने उसका नाम 'शैलकुमार' रखा तथा हनुमत द्वीप में उसका जन्मोत्सव आयोजित होने के कारण जगत् में वह 'हनुमान' नाम से विख्यात हुआ।

इस प्रकार शैल अथवा हनुमानकुमार, हनुमत द्वीप में रहते थे, देव सदृश प्रभा के धारी उन हनुमानकुमार की चेष्टाएँ सभी के लिए आनन्ददायिनी बनी हुई थीं।

राजा श्रेणिक को सम्बोधित करते हुए श्री गौतमस्वामी कहते हैं – 'हे श्रेणिक! प्राणियों के पूर्वोपार्जित पुण्य के फलस्वरूप पर्वतों का भेदक महाकठोर वज्र भी पुष्प के समान कोमलरूप परिणमित हो जाता है। महा आतापकारक अग्नि भी चन्द्र-किरण सदृश शीतल बन जाती है, इसी तरह तीक्ष्ण धारयुक्त तलवार भी मनोहर कोमल लता सदृश हो जाती है – ऐसा जानकर जो जीव विवेकी हैं, वे पाप से विरक्त हो जाते हैं। हे जीवों! इस बात को श्रवण करके तुम भी जिनराज के पवित्र चरित्र के अनुरागी बनो।'

कैसा है जिनराज का चरित्र? 'मोक्षसुख देने में चतुर है।'

यह सारा जगत् ही मोह के कारण जन्म-जरा एवं मरण के दु:खों से अत्यन्त तप्तायमान है, उन दु:खों से छुड़ाकर परम सुख प्रदान करने में समर्थ – ऐसे श्री जिनेन्द्र भगवान के वीतरागी चरित्र का अनुसरण करो।

✦ ✦ ✦

५

पवनकुमार की व्यथा

गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते हैं – 'हे मगधाधिपति! यह तो मैंने श्री हनुमान के जन्म का वृतान्त कहा। अब हनुमान के पिता पवनञ्जय का वृतान्त सुनो —

पवनकुमार की व्यथा —

अञ्जनासुन्दरी से विदा प्राप्त कर पवनञ्जय शीघ्र ही विमान से महाराज रावण के समीप पहुँचे और उनकी आज्ञानुसार उन्होंने राजा वरुण से युद्ध कर, खरदूषण को मुक्त कराया एवं राजा वरुण को बन्दी बनाकर महाराज रावण के समक्ष प्रस्तुत किया।

पवनकुमार की अद्‌भुत शूरवीरता से महाराज रावण को अत्यन्त हर्ष हुआ। तत्पश्चात् महाराज रावण से विदा प्राप्त कर कुमार पवनञ्जय ने अञ्जना के स्नेह के वशीभूत होकर शीघ्र ही अपने राज्य की तरफ प्रस्थान कर दिया।

जब राजा प्रहलाद को विजयी कुमार के शुभागमन का समाचार प्राप्त हुआ तो उन्होंने नगर कर शृङ्गार करवाकर कुमार का स्वागत किया।

पवनकुमार ने भी राजमहल में पहुँचकर अपने माता–पिता को सादर प्रणाम किया। किञ्चित समय राज्यसभा में बैठकर सबसे कुशल समाचार पूछे और तत्पश्चात् शीघ्र ही प्रहस्त मित्र के साथ

अञ्जना के महल की तरफ प्रस्थान किया किन्तु... जैसे जीवविहीन शरीर शोभास्पद नहीं लगता, उसी तरह अञ्जनारहित, वह महल भी उन्हें मनोहर न लगा। इस कारण कुमार का मन अप्रसन्न हो गया और वह प्रहस्त से कहने लगा।

हे मित्र! यहाँ तो प्राणप्रिया अञ्जना कहीं दृष्टिगोचर नहीं हो रही, वह कहाँ होगी? उसके बिना तो यह महल एकदम सुनसान प्रतीत हो रहा है, अत: तुम जाकर ज्ञात करो कि वह कहाँ हैं?'

प्रहस्त ने वहाँ प्रियजनों से पूछकर कुँवर से कहा – 'हे मित्र! अञ्जना के चरित्र पर सन्देह करके राजमाता ने उन्हें महेन्द्रनगर भिजवा दिया है।'

प्रहस्त द्वारा कथित यह वृतान्त सुनते ही कुमार के मन में क्षोभ उत्पन्न हुआ, चित्त उदास हो गया; अत: माता-पिता से आज्ञा प्राप्त किये बिना ही उन्होंने अपने मित्र के साथ महेन्द्रनगर की तरफ प्रस्थान कर दिया।

महेन्द्रनगर ज्यों-ज्यों करीब आजा जा रहा था, त्यों-त्यों उनका मन प्रिया-मिलन की मधुर कल्पनाओं से आनन्दित हो रहा था।

प्रसन्नचित्त कुमार ने प्रहस्त से कहा – 'हे मित्र! देखो यहाँ अञ्जनासुन्दरी का निवास स्थान होने से यह नगर कैसा मनोहर ज्ञात हो रहा है। जैसे, कैलाशपर्वत पर स्थित जिनमन्दिर के शिखर शोभायमान हैं; इसी तरह यहाँ के महलों के शिखर भी शोभायमान हो रहे हैं।' – इस तरह बातचीत करते हुए दोनों मित्र महेन्द्रनगर के समीप जा पहुँचे।

ज्यों ही पवनकुमार के शुभागमन का समाचार राजा महेन्द्र को ज्ञात हुआ तो उन्होंने उनका भव्य स्वागत कर नगर में प्रवेश करवाया।

महल में पधारकर कुमार कुछ समय राजा महेन्द्र के पास बैठे और पश्चात् महारानी को नमस्कार कर अञ्जना को देखने की अभिलाषा से उसके महल की तरफ प्रस्थान किया, परन्तु... वहाँ भी अञ्जना को न पाकर अत्यन्त विरहातुर होते हुए किसी बालिका से पूछा –

'बालिके! हमारी प्रिय अञ्जना कहाँ है?'

उत्तर देते हुए उसने कहा – 'हे देव! आपकी प्रिया यहाँ नहीं है, उसे तो महाराजश्री ने वनवास भेज दिया है।'

इस बात को सुनकर जैसे वज्रपात गिरा हो – ऐसे कुमार का हृदय चूर-चूर हो गया। जैसे कान में पिघला हुआ गर्म शीशा डाला गया हो – ऐसी उनकी दशा हो गयी, उनके होश खो गये; जीवरहित मृत शरीर जैसी उनकी दशा हो गयी, शोकाताप से उनका मुख एकदम कान्तिविहीन हो गया। इस प्रकार हतोत्साहित होकर कुमार ने शीघ्र ही महेन्द्रनगर का परित्याग कर दिया और अञ्जना की खोज हेतु सोचने लगे।

कुमार को अत्यन्त आतुर देखकर उनके मित्र प्रहस्त को भी बहुत दुःख हुआ। वह कहने लगा – 'हे मित्र! तुम खेद-खिन्न क्यों होते हो? धैर्य धारण कर अपने चित्त को निराकुल करो। यह पृथ्वी है ही कितनी सी। अञ्जना, जहाँ भी होगी, हर सम्भव प्रयत्न करके हम उसे खोज लेंगे।

कुमार ने कहा – 'हे मित्र! तुम तो मेरे पिता के पास आदित्यपुर

वापस जाओ और उन्हें सम्पूर्ण वृतान्त से अवगत कराकर कहना कि यदि मेरी प्रिया फिर से मुझे प्राप्त नहीं हुई तो मेरा जीवन भी असम्भव है। मैं स्वयं तो पृथ्वीतल पर चारों ओर उसकी खोज करूँगा ही, तुम भी योग्य व्यवस्था करो।'

कुमार की आज्ञानुसार प्रहस्त ने तो आदित्यपुर की तरफ प्रस्थान किया और इधर पवनकुमार अकेले ही अम्बरगोचर नामक हाथी पर चढ़कर अञ्जना की खोज हेतु पृथ्वी पर वन-जङ्गलों में चारों तरफ विचरण करने लगे। उनके मन में अनेक प्रकार की आशङ्काएँ उत्पन्न होने लगीं – 'अरे! यह कोमल शरीरवाली अञ्जना, शोक-सन्तप्त हो कहाँ गयी होगी? जिसके हृदय में सदैव ही मेरा ध्यान रहता था, वह विरहताप से तप्त हो सघन वन में किस तरफ गयी होगी? वह सत्यवादी, निष्कपट, धर्मधारक और गर्भ के भारसहित कदाचित् बसन्तमाला से बिछुड़ गयी होगी तो? कहीं वह पतिव्रता श्राविका राजकुमारी शोक के कारण अन्धी तो नहीं हो गयी? अथवा विकट वन में परिभ्रमण करते हुए भूखी-प्यासी कहीं अजगरों के स्थल गहन कुएँ में तो नहीं गिर गयी? अथवा दुष्ट पशुओं की भयङ्कर गर्जना से भयभीत हो, उस निर्दोष गर्भवती के प्राण तो नहीं छूट गये होंगे?'

इस प्रकार चिन्तामग्न पवनकुमार, वन में इधर-उधर भटकते हुए अञ्जना की शोध में तत्पर थे। उनके मन में नाना प्रकार के सङ्कल्प-विकल्प की तरङ्गें तरङ्गित हो रही थी। वे विचार रहे थे – 'कही मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारी अञ्जना इस घोर वन में पानी के बिना कण्ठ सूखने से प्राणरहित तो नहीं हो गयी? कदाचित् गंगा नदी पार करते समय वह भोली राजबाला बह तो नहीं गयी?

ऐसा भी हो सकता है कि अनेक कंकड़-काँटों से उसके कोमल पैर बिंध गये हों और उसमें एक कदम चलने की शक्ति भी न रही हो ? कौन जाने क्या दशा हुई होगी ? कदाचित् महादुःख के कारण गर्भपात हो गया हो और जिनधर्म भक्त वह सती अत्यन्त विरक्त भाव से आर्यिका ही बन गयी हो ?'

इस प्रकार मन में प्रवर्तित अनेक प्रकार के अन्तर्द्वन्द्वों सहित परिभ्रमण करते-करते पवनकुमार उसी गुफा के समीप पहुँचे, जहाँ पहले अञ्जना का निवास था। गुफा में प्रवेश करते ही पवनकुमार ने देखा कि वहाँ भगवान मुनिसुव्रतनाथ की प्रतिमा विराजमान है। जिनबिम्ब को देखते ही कुमार को विस्मय हुआ, वह भक्तिपूर्वक जिनदेव की वन्दना कर स्तुति करने लगा – 'हे वीतराग जिनेन्द्रदेव ! आपके चरण-कमल में मेरा सादर प्रणाम है। हे नाथ ! आप पूर्ण सुखी हैं, आप ही जगत् के जीवों को शरणभूत हैं। हे सर्वज्ञपिता ! इस जगत में संयोग-वियोग से आकुलित जीव अपने हृदय में आपका ध्यान धारण कर शान्तिलाभ प्राप्त करते हैं।'

इस प्रकार स्तुति कर वह गुफा में बैठकर भगवान का ध्यान करने लगा। कुछ देर पश्चात् गुफा से बाहर आकर पवनकुमार विचार करने लगा – 'इस गुफा में यह प्रतिमा कहाँ से आई ? किसने इस गुफा में इसकी स्थापना की ? कहीं अञ्जना तो यहाँ नहीं रहती थी ? अवश्य ही वह यहाँ रही होगी। वह तो जिनेन्द्रदेव की परमभक्त है, अवश्य ही दर्शन-पूजनार्थ, यह प्रतिमा उसने यहाँ स्थापित करायी होगी। अहो ! कैसा भी सङ्कट काल हो, जिनेन्द्रदेव का विस्मरण धर्मात्मा जीव कैसे कर सकता है ?'

इस प्रकार विचारकर कुमार उस गुफा में तथा वहीं आस

-पास अञ्जना को खोजने लगे... खूब जोर-जोर से उसके नाम से पुकारने लगे, किन्तु कहीं भी अञ्जना का पता न लगा।

पर्वत और वन-जङ्गल में घूम-घूमकर पवनकुमार ने खोज की परन्तु कहीं भी अपनी प्राणप्रिया को नहीं खोज पाये, अतः वे अत्यन्त निराश हो गये। उस समय उन्हें सबकुछ शून्य प्रतीत हो रहा था, अतः उन्होंने प्राणोत्सर्ग का निर्णय कर लिया।

अञ्जना के बिना उनका मन न तो पर्वत पर लगता था और न गुफा में और न मनोहर वृक्ष और नदी के किनारे ही।

वे मोह से आच्छादित हो, विवेक-विहीन हो, वृक्षों से भी अञ्जना के विषय में पूछने लगे – 'हे वृक्ष! तूने कहीं मेरी प्रिया को देखा है?'

पर्वत से पूछते हैं – 'अरे पर्वत! क्या तुमने अपनी किसी गुफा में अञ्जना को शरण प्रदान की है?'

इस प्रकार भ्रमण करते हुए वे भूतरुवर वन में पहुँचे और वहाँ पहुँचते ही हाथी से उतर पड़े।

जिस तरह मुनिजन आत्मा का ध्यान करते हैं, इसी तरह वे भी अपनी प्रिया का ध्यान करने लगे। हथियारादि सब सामग्री जमीन पर डाल दी और हाथी से कहने लगे – 'हे गजराज! अब तुम स्वच्छन्दतापूर्वक इस वन में भ्रमण करो।'

किन्तु हाथी ने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया और वह वहीं

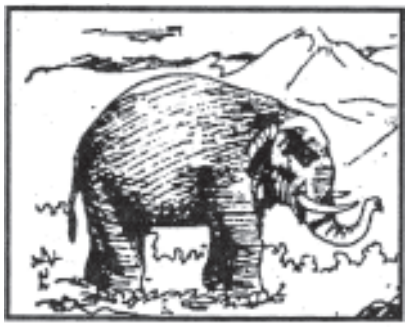

विनयपूर्वक खड़ा हो गया। उसे सम्बोधित करते हुए कुमार फिर कहने लगे – 'हे गजेन्द्र! इस नदी के किनारे विशाल वन है, तुम वहीं घास का सेवन करो और वन में स्थित हाथियों के समूह के नायक होकर यत्र-तत्र-सर्वत्र विचरण करो, अब तुम स्वतन्त्र हो।' लेकिन वह हाथी तो कृतज्ञ था, स्वामीभक्त था, अत: जैसे सच्चा भ्राता कभी भी अपने भाई का सङ्ग नहीं छोड़ता; उसी प्रकार उस हाथी ने कुमार के सङ्ग का त्याग नहीं किया, वह भी उदासचित्त हो कुमार के समीप ही निवास करने लगा।

पवञ्जयकुमार अत्यन्त शोक-सन्तप्त हो रहे है, उनका चित्त एकमात्र अञ्जनासुन्दरी के ही चिन्तवन में लगा हुआ है। वे सोच रहे हैं – 'यदि मेरी प्राणप्रिया अञ्जना मुझे प्राप्त नहीं हुई तो मैं भी इसी वन में प्राणों का परित्याग कर दूँगा।'

इस प्रकार वन में बैठे-बैठे अनेक प्रकार के विकल्पों की व्याकुलता से पवनकुमार समय व्यतीत कर रहे थे।

यहाँ शास्त्रकार कहते हैं – 'पवनकुमार, अञ्जना के ध्यान में ऐसे तल्लीन हैं कि यदि ऐसी ही तल्लीनता आत्मध्यान में हो जाए तो वह तत्क्षण मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं।'

✦ ✦ ✦

६

पवन और अंजना का मिलन

इधर कुमार से विदा प्राप्त कर उनका मित्र प्रहस्त, पिता के समीप पहुँचा और उन्हें सर्व वृतान्त से अवगत करा दिया, जिसे सुनते ही महाराज प्रहलाद शोक-सन्तप्त हो गये, साथ ही सभी जन शोक सागर में निमग्न हो गये।

कुँवर की माता केतुमति भी पुत्र शोक से अत्यन्त पीड़ित होकर रोते हुए प्रहस्त से बोली – 'अरे प्रहस्त! तू मेरे पुत्र को अकेला ही छोड़ आया – यह तूने ठीक नहीं किया।'

प्रहस्त ने कहा – 'हे माताजी! कुमार ने अत्यन्त आग्रह करके मुझे आपके पास यह समाचार देने हेतु भेजा है; इसलिए मैं आया हूँ, किन्तु अब मैं भी वापस जा रहा हूँ।'

माता ने पूछा – 'कुमार कहाँ है ?'

प्रहस्त ने कहा – 'जहाँ अञ्जना होगी, वहीं वे भी होंगे।'

माता ने पूछा – 'अञ्जना कहाँ है ?'

प्रहस्त ने कहा – 'यह मुझे ज्ञात नहीं। हे माता! जो जीव बिना विचारे शीघ्रता से कोई कार्य करते हैं, उन्हें बाद में पछताना ही पड़ता है। आपके पुत्र ने तो यह निश्चय कर लिया है कि यदि उसे अञ्जना प्राप्त नहीं हुई तो वह प्राणत्याग कर देगा।'

कुमार के इस कठोर निर्णय की जानकारी प्राप्त होते ही

मातासहित अन्त:पुर की समस्त स्त्रियाँ रुदन करने लगीं।

विलाप करती हुई माता कहने लगी – 'हाय! हाय! मुझ पापिनी ने यह क्या किया? अरे! मैंने महासती पर कलङ्क लगाया, इस कारण मेरे पुत्र का जीवन भी सन्देहास्पद है। मैं क्रूरभाव की धारक, वक्रपरिणामी एवं मन्दभागिनी हूँ। मैंने बिना विचारे ही यह कार्य किया है। यह नगर, यह कुल, यह विजयार्द्ध पर्वत एवं यह सेना – कोई भी पवनञ्जय के बिना शोभते नहीं हैं। मेरे पुत्र के समान अन्य कौन है? जिसने रावण से भी अविजित (न जीता जानेवाला) – ऐसे वरुण राजा को क्षणमात्र में ही बन्दी बना लिया। हे वत्स! देव-गुरु की पूजा में तत्पर विनयवन्त तू कहाँ है? तेरे दु:ख से मैं तप्तायमान हूँ। हे पुत्र! तू आकर मुझसे बात कर और मेरे शोक का निवारण कर।' – इस प्रकार विलाप करती हुई, वह सिर पीटने लगी।

रानी केतुमति के करुण-विलाप से सारा कुटुम्ब शोकाकुल हो गया। राजा प्रहलाद के नेतृत्व में सबने कुमार पवनञ्जय की खोज करने का विचार किया। दोनों श्रेणियों के विद्याधरों को भी आदरपूर्वक खोज के लिए आमन्त्रित कर लिया गया। सभी आकाशमार्ग से कुँवर की खोज हेतु निकल पड़े। क्या पृथ्वी और क्या घनघोर जङ्गल; क्या पर्वत और क्या गुफा, वे सर्वत्र कुमार की खोज करने के लिए विचरने लगे।

राजा प्रहलाद का एक दूत राजा प्रतिसूर्य के समीप गया और उन्हें सम्पूर्ण वृतान्त से अवगत कराया, जिसे सुनकर प्रतिसूर्य को बहुत शोक हुआ। अञ्जना को जब यह समाचार विदित हुए तो उसे पहले की अपेक्षा अधिक दु:ख हुआ। वह आँखों से अश्रुधारा

बहाती हुई रुदन करने लगी – 'हा नाथ! मेरे प्राणाधार!! मेरा चित्त आप ही के प्रति समर्पित है, तथापि इस जन्मदुखियारी को छोड़कर आप कहाँ चले गये? ऐसा भी क्या क्रोध कि समस्त विद्याधरों से अदृश्य हो गये! एक बार पधारकर अमृतवचन बोलो। इतने दिन तक तो आपके दर्शन की अभिलाषा से प्राणों को टिकाये रखा, अब भी यदि आपके दर्शन न हों तो इन प्राणों से मुझे क्या प्रयोजन है? मेरा मनोरथ था कि अब तो नाथ का समागम होगा, किन्तु मेरा यह मनोरथ ही टूट गया। अरे रे! इस मन्दभागिनी के कारण आपको कष्ट प्राप्त करना पड़ा। आपके कष्ट की बात सुनने से पूर्व ही मेरे प्राण क्यों नहीं छूट गये।'

अञ्जना को इस तरह विलाप करती देख बसन्तमाला कहने लगी – 'हे देवी! ऐसे वचन मत बोल। तू धैर्य धारण कर, अवश्य ही तुझे तेरे स्वामी का समागम प्राप्त होगा।'

राजा प्रतिसूर्य ने भी उसे धैर्य बँधाते हुए कहा – 'हे पुत्री! तू विश्वास रख, मैं शीघ्र ही तेरे पति को खोजकर लाऊँगा।'

इस प्रकार कहकर मन से भी तीव्र गतिमान विमान में बैठकर राजा प्रतिसूर्य ने कुमार की खोज आरम्भ कर दी। राजा प्रतिसूर्य की सहायतार्थ दोनों श्रेणियों के विद्याधर एवं लंकानिवासी भी इस कार्य में जुट गये। खोजते-खोजते वे सभी भूतरुवर वन में आये और वहाँ अम्बरगोचर हाथी को देखा, जिससे सभी विद्याधरों को अपार हर्ष हुआ कि जहाँ यह हाथी है, वहीं पवनकुमार भी होंगे क्योंकि पूर्व में भी अनेक बार कुमार इस गज के साथ देखे गये हैं।

जब विद्याधर उस अञ्जनगिरी समान हाथी के समीप पहुँचे तो उसे निरंकुश देखकर भयभीत हो उठे और वह हाथी भी विद्याधरों

के लश्कर एवं शोरगुल को देख-सुनकर क्षोभावस्था को प्राप्त हुआ, उसके कपाल में से मद झरने लगा और वह गर्जना करने लगा। वह तीव्र वेग से कुमार के आस-पास चक्कर लगाने लगा। जिस तरफ हाथी दौड़ता, विद्याधर उस दिशा से हट जाते। स्वामी की रक्षार्थ तत्पर वह हाथी सूँड़ में तलवार लेकर कुमार के समीप खड़ा हो गया। कुँवर की समीपता छोड़कर वह थोड़ा भी इधर -उधर नहीं होता था, उसके भय से विद्याधर भी समीप नहीं आ सकते थे। अन्ततोगत्वा विद्याधरों ने हथिनी के द्वारा स्नेहपूर्वक उस पर काबू पाया और समीप जाकर कुमार को देखने लगे।

कुमार तो एकदम शान्त मौन से इस प्रकार बैठे थे, मानो वे काठ के पुतले हों। विद्याधरों के अनेक प्रयत्न भी उनके चिन्तवन युक्त मौन को नहीं तोड़ सके। जैसे, ध्यानमग्न मुनिराज किसी से चर्चा-वार्ता नहीं करते, वही स्थिति इस समय कुमार की थी।

पवञ्जय के माता-पिता उसका मस्तक चूमकर अश्रुपूरित नेत्रों से गद्‌गद्‌वाणी में कहने लगे – 'हे पुत्र! हे विनयवान!! तू हमें त्यागकर यहाँ क्यों आया? तू तो राजमहल का वासी है, इस वन में तूने रात्रि कैसे व्यतीत की। हे पुत्र! तू मौन क्यों हैं?'

इस प्रकार उन्होंने हर सम्भव प्रयत्न किया परन्तु कुमार ने एक शब्द भी उच्चारण नही किया।

तब 'इसने मौन धारण कर अब मरण का ही निश्चय किया है' – ऐसा समझकर समस्त विद्याधरों को महाशोक हुआ और पितासहित सभी विलाप करने लगे।

तभी अञ्जना के मामा राजा प्रतिसूर्य, कुमार के समीप आकर कहने लगे – 'सभी शान्त हो जाओ। मैं वायुकुमार (पवनकुमार)

के साथ वचनालाप करूँगा।' – इतना कहकर वे कुमार के एकदम समीप गये और उसके कान में कहने लगे – 'हे कुमार! सुनों, मैं तुम्हें अञ्जना का वृतान्त सुनाता हूँ' —

'सन्ध्याभ्र नामक सुन्दर पर्वत पर अनङ्ग-विजय नामक मुनि को केवलज्ञान होने पर इन्द्रादिक देव उनके दर्शनार्थ पधारे थे, उस समय मैं भी वहाँ पहुँचा था। केवलीप्रभु की वन्दना करने के उपरान्त जब मैं वापस अपने नगर की तरफ आ रहा था, तब मेरा विमान एक गुफा के ऊपर आया तो मैंने उस गुफा में से आता एक नारी का स्वर सुना, गुफा में पहुँचकर देखा तो वहाँ अञ्जना थी। जब मैंने उससे वनवास का कारण पूछा तो उसकी सखी ने मुझे सम्पूर्ण स्थिति से अवगत कराया। अञ्जना शोक-सन्तप्त हो रुदन कर रही थी; अत: मैंने उसे धैर्य बँधाया। उसी गुफा में उसने पुत्ररत्न को जन्म दिया। उस पुत्र की कान्ति से तो सारी ही गुफा ऐसी जगमगा रही थी, मानो सुवर्ण निर्मित हो।

इतनी बात सुनते ही हर्ष से रोमाञ्चित पवनकुमार पूछने लगा – 'हे महानुभाव! अञ्जना कहाँ है ? और बालक तो सुख से है न ?'

प्रतिसूर्य ने कहा – 'अञ्जना को उसके पुत्रसहित विमान में बैठाकर मैं अपने राज्य हनुमत द्वीप ले जा रहा था, तभी एकाएक मार्ग में बालक, विमान से गिर पड़ा....'

बालक के गिरने की बात सुनते ही 'हाय-हाय' – ऐसे उद्‌गार कुमार के मुख से निकल पड़े।

तब प्रतिसूर्य ने कहा – 'अरे कुमार! चिन्ता मत करो, किन्तु उसके पश्चात् घटित घटना का श्रवण करो, जिससे तुम्हारा सम्पूर्ण दु:ख नष्ट हो जाएगा।

...बालक के गिरते ही मैंने विमान को नीचे उतारकर देखा तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। मैंने देखा, पर्वत तो खण्ड-खण्ड हो गया है और बालक एक शिला पर पड़ा-पड़ा क्रीड़ा कर रहा है। दशों दिशाएँ, उसके तेज से जगमगा रहीं हैं। तब मैंने उस चरमशरीरी बालक को तीन प्रदक्षिणा देकर नमस्कार किया। उसकी माता को भी अपूर्व आनन्द हुआ और उसका नाम 'शैलकुमार' रखा। सखी बसन्तमाला एवं शैलकुमारसहित अञ्जना को मैं हनुमत द्वीप ले गया, वहाँ पुत्र-जन्म का महान उत्सव मनाया, अत: उस बालक का 'हनुमान' – यह दूसरा नाम प्रसिद्ध हुआ।

हे कुमार! यह पतिव्रता स्त्री अपनी सखी एवं पुत्रसहित हमारे नगर में विराजमान है, वहाँ सर्व आनन्द हैं।'

इस वृतान्त को सुनकर पवनकुमार को हार्दिक प्रसन्नता हुई और अञ्जना को देखने के उद्देश्य से शीघ्र ही उन सबने हनुमत द्वीप की तरफ प्रस्थान कर दिया।

नगर में पहुँचने पर राजा प्रतिसूर्य ने सभी का भव्य स्वागत किया।

जब कुमार, अञ्जना के निकट पहुँचे तो लज्जाशील अञ्जना ने बालक हनुमान को कुमार के हाथों में सौंप दिया। मुक्तिदूत, चरमशरीरी पुत्र को देखनेमात्र से कुमार एवं अञ्जना अपने सम्पूर्ण दु:ख भूल गये और लम्बे अन्तराल के पश्चात् हुए इस मधुर-मिलन से दोनों को अपार हर्ष हुआ।'

राजा प्रतिसूर्य ने सभी विद्याधरों को कुछ दिनों अपने यहाँ सम्मानसहित ठहराया। तत्पश्चात् सभी ने अपने-अपने स्थान की ओर प्रस्थान किया। जब पवनकुमार भी जाने लगे, तब उन्होंने

पवनकुमार को अत्याग्रह करके वहीं रोक लिया। हनुमत द्वीप में हनुमान, देवों की तरह क्रीड़ा करते हैं और आनन्दकारी चेष्टाएँ करते हैं, जिन्हें देखकर माता-पिता के आनन्द का पार नहीं रहता।

इस प्रकार समय व्यतीत हो गया। हनुमान यौवनावस्था को प्राप्त हुए, कामदेव होने से उनके रूप की अद्‌भुतता लेखनी का विषय नहीं है। वे महाबलवान, अतिशय बुद्धिमान हैं, उन्हें अल्प वय में ही अनेक विद्याएँ सिद्ध हुई, उन्हें रत्नत्रय धर्म के प्रति परमप्रतीति है। वे सर्व शास्त्रों के अभ्यास में प्रवीण हैं तथा देव -गुरु-धर्म की उपासना में सदैव तत्पर हैं।

श्री हनुमान के जन्म, पवनञ्जय-अञ्जना के मिलाप की यह कथा अब यहीं समाप्त होती है। इसे पूर्ण करते हुए शास्त्रकार कहते हैं – 'श्री हनुमान जन्म एवं पवनञ्जय-अञ्जना के मिलाप की यह अद्‌भुत कथा अनेक रसों से परिपूर्ण है। जो जीव, भावपूर्वक इस कथा को सुनेंगे, सुनायेंगे व पढ़ेंगे, उन्हें धर्म में दृढ़ता प्राप्त होगी, उनके वैराग्य की अभिवृद्धि होगी, अशुभकर्मों की निवृत्ति एवं शुभकर्मों में प्रवृत्ति होगी – इस तरह से उन्हें अनुक्रम से धर्म की अभिवृद्धि होते-होते जगत् में दुर्लभ – ऐसे मोक्ष की प्राप्ति होगी।' ●●

इस पुस्तक के द्वितीय भाग में
कामदेव हनुमान का जीवन चरित्र
'भगवान हनुमान'
अवश्य पढ़िए।